* श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः *

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेन कथासु यः। नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम्॥

अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मासुप्रसीदति ॥

सर्वोत्कृष्ट धर्म है वह जो आत्मा को आनन्द प्रदायक ।
भक्ति अधोक्षज की अहैतुकी विघ्नशून्य अति मंगलदायक ॥

सब धर्मों का श्रेष्ठ रीति से पालन करते जीव निरन्तर ।
किन्तु हरि-कथा-प्रीति न हो, श्रम व्यर्थ सभी, केवल बंधनकर ॥

वर्ष ६ | गौराब्द ४७८, मास—मधुसूदन १८, वार—कारणोदशायी
बृहस्पतिवार, ३१ वैशाख, सम्वत् २०२१, १७ मई १९६४ | संख्या १२

आचार्य-वन्दना

नमो ॐ श्रीविष्णुपाद श्री-भक्तिप्रज्ञान केशव !
श्रीप्रभुपाद प्रेष्ठाय गौरपार्षद रूपिणे ॥
श्रीचैतन्य - मनोभीष्ट परिपूरक मूर्षये ।
गौर-सारस्वताम्नाय आचार्याय नमोनमः ॥
गूढ़ानुरागिणे तुभ्यं श्रीसिद्धान्तसरस्वतौ ।
श्रीगौर-करुणा-शक्ति-स्वरूपाय नमो नमः ॥
श्रीरूपानुगसिद्धान्तविपच्चिमुखमर्द्दिने ।
कृष्ण - तत्त्वज्ञ - सम्राजे कृतिरत्नाय ते नमः ॥

श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय भागवत-परम्परा

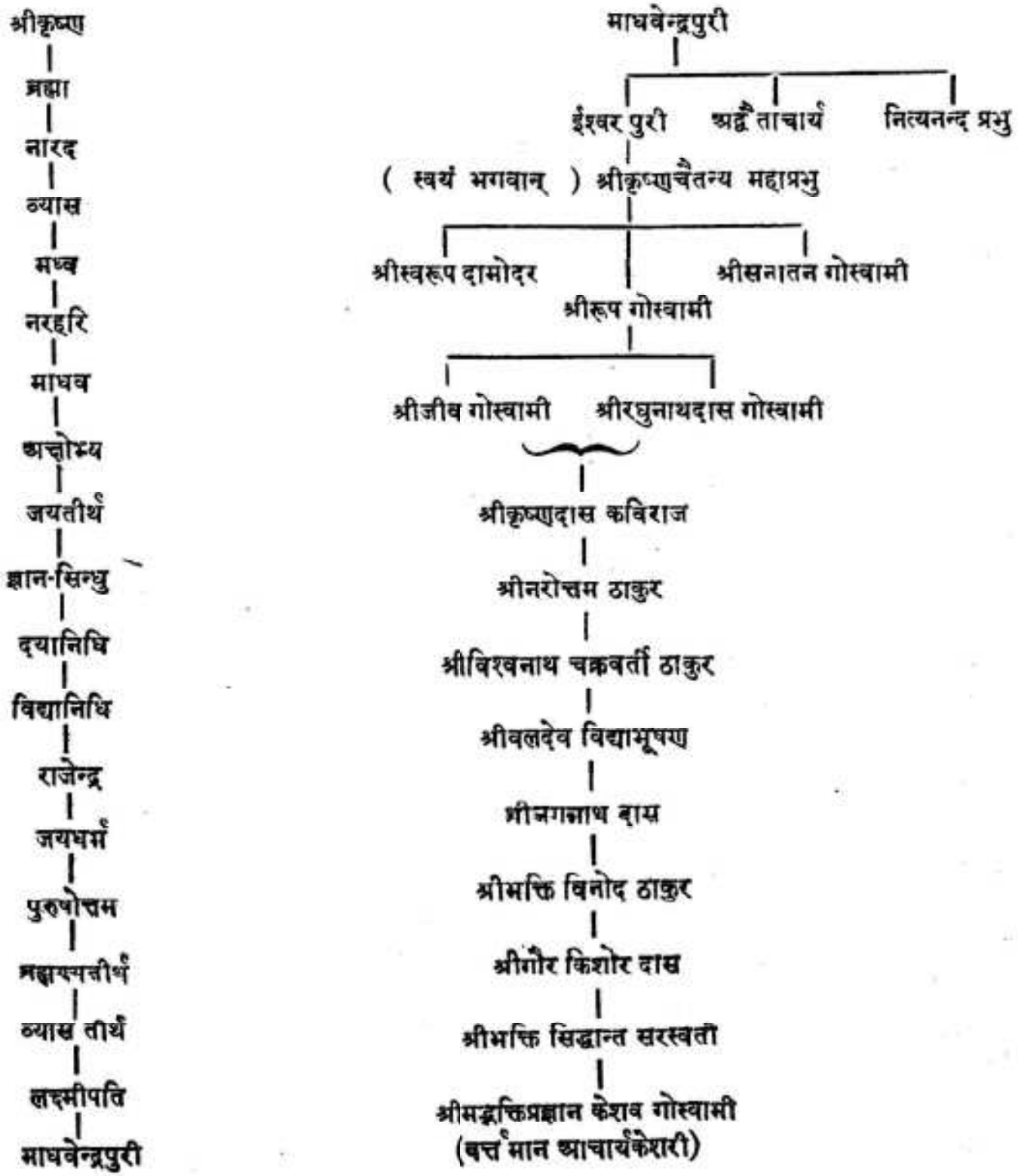

श्रीश्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-गुरु-परम्परा

श्रीकृष्ण - ब्रह्म - देवर्षि - बादरायण - संज्ञकान् ।
श्रीमध्व - श्रीपद्मनाभ - श्रीमन्नृहरि - माधवान् ॥
अक्षोभ्य - जयतीर्थ - श्रीज्ञानसिन्धु - दयानिधीन् ।
श्रीविद्यानिधि - राजेन्द्र - जयधर्म्मान् क्रमाद्वयम् ॥
पुरुषोत्तम - ब्रह्मण्य व्यासतीर्थांश्च संस्तुमः ।
ततो लक्ष्मीपतिं श्रीमन्माधवेन्द्रञ्च भक्तितः ॥
तच्छिष्यान् श्रीश्वराद्वैत नित्यानन्दान् जगद्गुरुन् ।
देवमीश्वरशिष्यं श्रीचैतन्यञ्च भजामहे ।
श्रीकृष्ण - प्रेमदानेन येन निस्तारितं जगत् ॥
महाप्रभु - स्वरूप - श्रीदामोदरः प्रियंकरः ।
रूपसनातनौ द्वौ च गोस्वामिप्रवरौ प्रभू ॥
श्रीजीवो रघुनाथश्च रूपप्रियो महामतिः ।
तत्प्रियः कविराज - श्रीकृष्णदासप्रभुर्मतः ॥
तस्य प्रियोत्तमः श्रीलः सेवापरो नरोत्तमः ।
तदनुगतभक्तः श्रीविश्वनाथः सदुत्तमः ॥
तदासक्तश्च गौड़ीयवेदान्ताचार्यभूषणम् ।
विद्याभूषणपाद श्रीबलदेवसदाश्रयः ॥
वैष्णवसार्वभौमः श्रीजगन्नाथप्रभुस्तथा ।
श्रीमायापुरधाम्नस्तु निर्देष्टा सज्जनप्रियः ॥

शुद्धभक्ति प्रचारस्य मूलीभूत इहोत्तमः ।
श्रीभक्तिविनोदो देव स्तत्प्रियत्वेन विश्रुतः ॥
तदभिन्नसुहृदवर्यो महाभागवतोत्तमः ।
श्रीगौरकिशोरः साक्षाद् वैराग्यं विग्रहाश्रितम् ॥
मायावादि - कुसिद्धान्त - ध्वान्तराशि - निरासकः ।
विशुद्धभक्तिसिद्धान्तैः स्वान्तपद्मविकाशकः ॥
देवोऽसौ परमो हंसो मत्तः श्रीगौरकीर्तने ।
प्रचाराचारकार्येषु निरन्तरं महोत्सुकः ॥
हरिप्रियजनैर्गम्य ॐ विष्णुपादपूर्वकः ।
श्रीपादो भक्तिसिद्धान्तसरस्वती महोदयः ॥
तत्प्रियोः भक्तिप्रज्ञान केशवो भागवत्तमः ।
मायावादान्धतमसे मग्नानुद्धारणेक्षमः ॥
श्रीरूपानुगसिद्धान्तसंस्थापकमहायशाः ।
गौर - कीर्तन सर्वस्व गौरधाम विवर्द्धनः ॥
सर्वे ते गौरवंशाश्च परमहंसविग्रहाः ।
वयञ्च प्रणता दासास्तदुच्छिष्ट ग्रहाग्रहाः ॥

आम्नाय-विवृति

[श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-सम्प्रदाय]

विश्वकर्त्ता ब्रह्मासे गुरु-परम्पराके माध्यमसे प्राप्त "ब्रह्म विद्या" नामक श्रुतियोंको आम्नाय कहते हैं। यह श्रुतिविद्या या आम्नाय-वाणी जिस गुरु-परम्परा की धारासे जगत्में प्रवाहित होती है, उसे 'आम्नाय-धारा या सम्प्रदाय-धारा कहते हैं।' अमरकोषमें 'आम्नाय' और 'सम्प्रदाय'--पर्यायवाची शब्द उल्लिखित हुए हैं। सम्—प्र—'दा' धातु कर्मवाच्यमें घञ् ('य' आगम हुआ है) प्रत्यय योगसे 'सम्प्रदाय' शब्द निष्पन्न हुआ है। भरत भी कहते हैं—"गुरु-परम्परागत सदुपदेशः शिष्ट-परम्परावतीर्णोपदेशः सम्प्रदायः" । शिष्य परम्परावतीर्ण उपदेश समूह एकमात्र सत् सम्प्रदायके माध्यमसे ही प्राप्त होते हैं। जिससे सम्यक् रूपसे भगवत्तत्त्वका ज्ञान प्राप्त हो, उसे ही सत्सम्प्रदाय कहते हैं।

श्रुति विद्या या आम्नाय-वाणीके मूल-प्रकाशक हैं--सृष्टि, स्थिति और प्रलयके मूलकर्ता, सर्वकारण-कारण, अचिन्त्यसर्वशक्तिमान स्वयं-भगवान श्रीकृष्ण। उनके अंशांश पुरुषावतार—परमेश्वरके निःश्वाससे यह श्रुति-विद्या प्रकटित है--

अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यद्ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि सर्वाणि निःश्वसितानि। —(बृहदारण्यक २।४।१०)

—महापुरुष परमेश्वरके निःश्वाससे चारोंवेद, इतिहास, पुराण, उपनिषद, श्लोक, सुत्र और अनुव्याख्या--ये सभी प्रकटित हैं। इतिहास—रामायण, महाभारत आदि; पुराण--श्रीमद्भागवत आदि १८ पुराण और १८ उपपुराण; उपनिषद–ईश, केन आदि ग्यारह उपनिषद, श्लोक—ऋषियों द्वारा रचित अनुष्टुप आदि छन्दोग्रन्थ; सूत्र—प्रधान-प्रधान तत्त्वाचार्योंद्वारा रचित ब्रह्मसूत्र आदि वेदार्थ-सूत्रसमूह; और अनुव्याख्या—आचार्यों द्वारा रचित उपरोक्त सूत्रोंके भाष्य-समूह—ये सब 'आम्नाय' शब्दके अन्तर्गत हैं इन सबमें अमल प्रमाण--श्रीमद्भागवत ही हैं।

प्रलयके समय यह वेद-वाणी लुप्त हो जाती है, तब सृष्टिके प्रारम्भमें स्वयं भगवान् उसका पुनः उपदेश ब्रह्माजीको करते हैं—

"कालेन नष्टा प्रलये वाणीयं वेदसंज्ञिता।
मयादौ ब्रह्मणे प्रोक्ता यस्यां धर्मो मदात्मकः॥
तेन प्रोक्ता स्वपुत्राय मनवे इत्यादि।
× × ×
एवं प्रकृतिवैचित्र्याद्भिद्यन्ते मतयो नृणाम्।
पारम्पर्येण केषाञ्चित् पाषण्डमतयोऽपरे॥
(भा० ११।१४।३-७)

श्रीकृष्ण कह रहे हैं--"हे उद्धव ! वेद-वाणी नित्य है। उसे मैंने सर्वप्रथम ब्रह्माको सुनाया था। उसमें मेरे स्वरूपनिष्ठ विशुद्ध भक्ति रूप आत्म-धर्म

का वर्णन है। यह वेदवाणी काल प्रभावसे जब प्रलयके समय लुप्त हो जाती है, तब सृष्टिके प्रारम्भ में मैं उसका उपदेश सबसे पहले ब्रह्माजीको करता हूँ। पुनः ब्रह्माजी उसका उपदेश अपने पुत्र मनु आदि को करते हैं। तदनन्तर परम्परा द्वारा उस विद्याको देवता, ऋषि, मनुष्य आदि प्राप्त करते हैं। उद्धव ! जो लोग ब्रह्मासे गुरु-परम्पराके माध्यमसे इस वेद-वाणीको यथार्थ अर्थोंके सहित प्राप्त करते हैं, वे विशुद्ध मत ग्रहण करनेवाले हैं। इसके विपरीत जो उपरोक्त गुरु-परम्पराकी अवहेला कर स्वतंत्र रूपसे मत-मतान्तरोंका प्रवर्तन आदि करते हैं, वे नाना-प्रकारके पाषण्डमतावलम्बी हो पड़ते हैं। पद्मपुराणमें भी ऐसा ही कहा गया है--

"सम्प्रदाय विहीना ये मंत्रास्ते विफला मताः।
अतः कलौ भविष्यन्ति चत्वारः सम्प्रदायिनः॥
श्रीब्रह्मरुद्रसनका वैष्णवाः क्षितिपावनाः।
चत्वारस्ते कलौ भाव्या ह्युत्कले पुरुषोत्तमात्॥"

अर्थात् सम्प्रदाय-प्रणालीसे बहिर्भूत मंत्रादि (उपासना समूह) व्यर्थ हैं। इसलिये ये सात्त्वत् सम्प्रदाय-चतुष्टय प्रकटित हैं--(१) श्री सम्प्रदाय, (२) श्रीब्रह्म-सम्प्रदाय, (३) श्रीरुद्र-सम्प्रदाय तथा (४) श्रीसनक सम्प्रदाय। कलियुगमें (१) श्रीअर्थात् लक्ष्मीजीने श्रीरामानुजाचार्यको, (२) जगद्गुरु ब्रह्माजीने श्रीमध्वाचार्यको, (३) श्रीरुद्रने श्रीविष्णु स्वामीको तथा (४) श्रीसनकादिकोंने श्रीनिम्बादित्य को अपने-अपने सम्प्रदायका प्रतिनिधिके रूपमें स्वीकार किया है। उपरोक्त चारों साम्प्रदायिक आचार्योंके पश्चात् उन-उन सम्प्रदायोंसे कुछ-कुछ विशेषताओंके कारण एक-एक शाखा-सम्प्रदाय भी प्रवर्त्तित हुए हैं; जैसे (१) श्रीब्रह्ममाध्व सम्प्रदायमें—श्रीगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय, (२) श्रीरामानुज सम्प्रदायमें--श्रीरामानन्दी सम्प्रदाय, (३) श्रीरुद्र-विष्णुस्वामी सम्प्रदायमें—श्रीवल्लभ-सम्प्रदाय तथा (४) श्रीसनक-निम्बादित्य सम्प्रदायमें—श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय। ये शाखा-सम्प्रदाय मूल सम्प्रदायसे सम्बन्धित होते हुए भी उनकी अवहेला न कर सिद्धान्त एवं उपासना आदिके सम्बन्धमें अपना-अपना वैशिष्ट्य रखते हैं

प्राचीन ऐतिह्यकी आलोचना करनेसे ऐसा देखा जाता है कि विष्णु शक्ति या विष्णुदासोंके द्वारा ही सम्प्रदाय-प्रवर्त्तनका कार्य साधित होता है। यद्यपि "धर्मन्तु साक्षात् भगवत् प्रणीतं," (भा० ६।३।११) तथा 'धर्मो जगन्नाथात् साक्षान्नारायणात्'-(महाभारत शान्तिपर्व ३४७।५४) "धर्ममूलो हि भगवान्' आदि शास्त्र-वचनों द्वारा सनातन धर्मका मूल श्रीभगवानको ही स्थिर किया गया है, फिर भी 'अकर्त्ता चै कर्ता च कार्यं कारणमेव च' (महा० शा० ३४८।६०) और नेत्थंभावेन हि परं द्रष्टुमर्हन्ति सूरयः' (भा० २।१०।४५) आदि शास्त्र प्रमाणोंके अनुसार यह प्रमाणित होता है कि सर्वकारणकारण श्रीभगवान धर्ममूल होने पर भी सम्प्रदाय-प्रवर्त्तनके व्यापारमें उनका साक्षात् कर्तृत्व नहीं होता। वे अपनी शक्ति या शक्त्याविष्ट पुरुषोंके द्वारा ही इस कार्यको साधित करते हैं।

उपरोक्त चारों सात्त्वत् सम्प्रदायोंमें से ब्रह्म-सम्प्रदाय ही सबसे पहला आदि सम्प्रदाय है, जिसके प्रवर्त्तक स्वयं ब्रह्माजी हैं। श्रीमद्भागवतमें "कालेन

नष्टा" (११।१४।३) के द्वारा इसी तथ्यकी पुष्टि होती है । पुनः ब्रह्माजीने सर्वप्रथम अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वाको इस ब्रह्म-विद्याका उपदेश किया—

"ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव-
विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता ।
स ब्रह्मविद्या सर्वविद्या-
प्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्राहः ।।
(मुण्डक १.१।१)

उपरोक्त श्रुति-पुराण-मंत्रोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्म-सम्प्रदाय सृष्टिके प्रारम्भ कालसे ही ही प्रचलित है। कुछ अर्वाचीन व्यक्ति धार्मिक असहिष्णुताके कारण सनक-सम्प्रदायको ही आदि एवं सर्व-प्राचीन सम्प्रदाय बतलाते हैं। परन्तु यह सोचनेकी बात है कि सनकादि कुमार, ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। ये कुमार पहले-पहले ब्रह्मवादी थे; परन्तु ब्रह्माजीकी कृपासे वैकुण्ठमें भगवत् स्वरूपकी माधुरीका साक्षात्कार कर भगवद् उपासनामें प्रवृत्त हुए थे। इस प्रकार ब्रह्माजी कुमारोंके भी पिता एवं उपदेष्टा होनेके कारण उनके भी सर्वथा पूज्य हैं। अतएव ब्रह्म-सम्प्रदाय ही आदि सम्प्रदाय ठहरता है। इधर कुछ लोग नाम-साम्यके कारण निम्बार्काचार्यको श्रीनिम्बादित्याचार्यके स्थान पर आरूढ़ कर या दोनोंको एक ही व्यक्ति मान कर श्रीनिम्बार्काचार्यको श्रीरामानुज, मध्व और विष्णु स्वामीसे पूर्वका आचार्य बतलाते हैं। परन्तु ऐतिह्य प्रमाणके अनुसार श्रीनिम्बादित्य कलिके प्रारम्भके जान पड़ते हैं तथा श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीवल्लभाचार्य (सन् १४७३ ई० में जन्म) के समसामयिक या उनके भी बादके आचार्य ठहरते हैं।*

ऐसी मान्यताके और भी कारण हैं। गवेषकोंका कहना है कि वैदान्तिक आचार्योंने, यहाँ तक कि ब्रह्मसूत्रकार श्रीव्यासदेवने भी स्वमत समर्थक या प्रतिपक्ष रूपमें पूर्वाचार्य या समसामयिक आचार्यों-का नामोल्लेख किया है। यदि निम्बार्काचार्यजी, जैसा कि कुछ लोग उनको नारदजीका साक्षात् शिष्य और श्रीव्यासके समसामयिक बतलाते हैं, श्रीव्यास-के समकालीन हैं तो श्रीव्यासजी उनका भी कहीं न कहीं अवश्य उल्लेख करते। इतना ही नहीं, किसी भी भाष्यकार या प्राचीन आचार्योंने, यहाँ तक कि श्रीगौड़ीय गोस्वामियोंने भी कहीं भी किसी प्रकारसे निम्बार्काचार्यका अथवा उनके रचित वेदान्त भाष्य-का कोई उल्लेख नहीं किया है।(क) श्रीचैतन्य-

*(क) Vide, An outline of the Regious Literature of India by Dr. T. N. Farquhar, P. 305; (ख) Notices of Sanskrit Mss. By Dr. R. L. Mittra Vol. III, Published under orders of the Govt. of Bengal, Cal. 1886.

(ग) रायबहादुर सुरेशचन्द्र सिंह राय विद्यार्णव, एम. ए. प्रणीत —"हिन्दूधर्मेर अभिव्यक्ति" २रा खण्ड, पृ० ३८६ में लिखा है—"निम्बार्काचार्यका जन्म १४२७ ई० में हुआ था।"

[a] Vide, Dr. Farquhars, An Out Lines of the Religious Literature of India P. 305, (1920), (b) Dr. Dasgupta's His of Ind Phil Vol. III P. 400 (1940).

चरितामृतमें केशव काश्मीरीका श्रीमन्महाप्रभुके निकट पराजयका तथा महाप्रभुजीके निकट उपासना प्रणाली आदि शिक्षा ग्रहणका जो प्रसङ्ग है—उससे गवेषकोंका ऐसा विचार है कि निम्बार्क सम्प्रदायमें श्रीराधाकृष्णकी मधुर रसकी उपासना श्रीगौड़ीय सम्प्रदायसे ली गयी है। श्रीरूप-सनातन जीव आदि छः गोस्वामियोंका व्यापक प्रभाव निम्बार्क सम्प्रदायके ऊपर संभव जान पड़ता है। इस प्रकार श्रीब्रह्म-सम्प्रदाय ही सर्वादि सात्वत् सम्प्रदाय प्रमाणित होता है।

कुछ सम्प्रदाय-तत्त्वानभिज्ञ अर्वाचीन व्यक्ति श्रीचैतन्य महाप्रभुको श्रीगौड़ीय संप्रदायका स्वतंत्र प्रवर्तक मानकर श्रीगौड़ीय सम्प्रदायको श्रीब्रह्म-माध्व सम्प्रदायसे पृथक् एक पंचम सम्प्रदाय बतलाते हैं। परन्तु उनकी ऐसी कुचेष्टा सर्वथा निराधार एवं मनः कल्पित है। आधुनिक युगमें गौड़ीय-सम्प्रदायके महान् विद्वान आचार्य जो सप्तम गोस्वामीके रूपमें प्रख्यात हैं, इस विषयमें लिखते हैं—

"श्रीजीव गोस्वामीने आप्त-वाक्योंकी प्रमाणिकता प्रमाणित कर पुराणोंकी प्रामाणिकता भी उसी प्रकार स्थापित किया है। उन्होंने अपनी अकाट्य युक्तियों एवं शास्त्रीय प्रमाणोंके बल पर यह सिद्ध किया है कि श्रीमद्भागवत ही सर्वश्रेष्ठ एवं अमल प्रमाण हैं। जिन लक्षणोंके द्वारा उन्होंने श्रीमद्भागवतका श्रेष्ठत्व स्थापित किया है, उन्हीं लक्षणोंके द्वारा उन्होंने ब्रह्मा, नारद, व्यास तथा उनके साथ दी श्रीशुकदेवजी को तथा तनदन्तर क्रमशः विजयध्वज, ब्रह्मण्यतीर्थ, व्यासतीर्थ आदिके तत्त्वगुरु श्रीमन्मध्वाचार्य को तथा इनके द्वारा रचित या प्रमाणके रूपमें ग्रहीत ग्रन्थोंको भी श्रेष्ठ प्रमाणकी कोटिमें ग्रहण किया है। इसके द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रीब्रह्म-माध्व सम्प्रदाय ही श्रीकृष्ण चैतन्यके अनुगत गौड़ीय वैष्णवोंकी गुरु-प्रणाली है—श्रीजीवगोस्वामीको यही अभीष्ट था। तदनन्तर श्रीकवि कर्णपुर गोस्वामीने इसी गुरु-प्रणालीकी पुष्टि स्वरचित "गौर गणोद्देश-दीपिका"—नागक ग्रन्थमें की है। यही नहीं गौड़ीय वेदान्ताचार्य श्रीबलदेव विद्याभूषणने भी स्वरचित "तत्त्व सन्दर्भकी टीका एवं "प्रमेय रत्नावली'में इसी गुरु प्रणालीको ग्रहण किया है। जो लोग इस गुरु-प्रणाली को अस्वीकार करते हैं, वे श्रीचैतन्यचरणानुचरोंके प्रधान शत्रु हैं—इसमें कोई संदेह नहीं। ***। श्रीमध्वमतमें भगवान् श्रीकृष्णका सच्चिदानन्द नित्य-विग्रह स्वीकृत है; इसी सिद्धान्तको अचिन्त्यभेदाभेदकी मूल भित्ति मान कर ही श्रीमन्महाप्रभुजीने श्रीमध्व सम्प्रदायको अंगीकार करनेकी कृपा की है।"*

कुछ तत्त्वानभिज्ञोंका भ्रम यह है कि "श्रीमन्महाप्रभु स्वयं भगवान् हैं। अतः वे स्वयं सम्प्रदाय-स्रष्टा हैं। वे किसी आचार्य द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदाय को अंगीकार करने क्यों जायेंगे? दूसरी बात मध्व-प्रवर्त्तित द्वैतवादके सिद्धान्तोंके साथ गौड़ीयोंके अचिन्त्यभेदाभेदके सिद्धान्तोंसे मेल नहीं खाते हैं; दोनोंके साधन एवं सिद्धिके विचार भी भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं। ऐसी दशामें गौड़ीय सम्प्रदायको मध्वसम्प्रदायके अन्तर्गत कैसे माना जा सकता है?"

*श्रील भक्ति विनोद ठाकुर कृत श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षा; पृष्ठ ११;

उपरोक्त भ्रमका समाधान यह है कि यह पहले ही प्रमाणित किया जा चुका है कि भगवान् सर्व-समर्थ होकर भी स्वयं सम्प्रदायका प्रवर्तन नहीं करते; बल्कि अपनी शक्ति या शक्त्याविष्ट पुरुष द्वारा इस कार्यको साधित करते हैं । जैसे ब्रह्मा आदि शक्त्याविष्ट पुरुष हैं; लक्ष्मीजी उनकी शक्ति हैं। इसके अतिरिक्त यदि श्रीकृष्ण और श्रीराम आदि भी भगवान होकर श्रीसान्दीपनी मुनि तथा श्रीवशिष्ठ जीको गुरुरूपमें ग्रहण कर सकते हैं, तब श्रीचैतन्य महाप्रभुको स्वयं कृष्ण ही हैं, उनको श्रीब्रह्ममाध्व परम्परा स्वीकार करनेमें कौनसी बाधा है ? श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने मध्वमतको कृपा पूर्वक अङ्गीकार कर उसके अभावोंको पूर्ण करते हुए उसे वेदका सर्वदेशीय मत-अचिन्त्यभेदाभेदके रूपमें प्रतिष्ठित किया है । भेद और वैशिष्ट्यमें अन्तर होता है । भेद किन्ही दो या अधिक वस्तुओंको पृथक् करता है; किन्तु वैशिष्ट्य—उसी एक वस्तुमें विद्यमान रहते हुए भी भेदकी प्रतीति जैसा करता है । श्रीगौड़ीय सम्प्रदाय के सिद्धान्तोंका मध्व सम्प्रदायके सिद्धान्तोंसे भेद नहीं हैं, बल्कि वैशिष्ट्य है । ये वैशिष्ट्य भेदका कारण नहीं बन सकते। यदि ऐसी बात है, तब मुरारी गुप्त और अनुपम गोस्वामी (जीव गोस्वामीके पिता)—दोनों ही श्रीरामोपासक होकर तथा श्रीवास पण्डित ऐश्वर्य मार्गको उपासक होकर भी गौड़ीय सम्प्रदायी नहीं माने जाते हैं ? मुरारी गुप्त, अनुपम एवं श्रीवास पण्डित गौड़ीय सम्प्रदायके हैं—यह सर्ववादी सम्मत है । यही नहीं, श्रीवास पण्डित श्रीमन् महाप्रभुजी पार्षद एवं सम्प्रदायके उपास्य पंचतत्त्वके अन्तर्गत माने जाते हैं । ऐसी दशामें कुछ वैशिष्ट्योंके कारण ही गौड़ीय सम्प्रदायको मध्वसम्प्रदायसे पृथक् एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय मानना सर्वथा अनुपयुक्त और अनभिज्ञता है । अतएव अपने सम्प्रदायके पूर्व-पूर्व आचार्योंके ग्रन्थों एवं विचारोंके अनुसार गौड़ीय सम्प्रदायने अपनी विशेषताको अक्षुण्ण रखते हुए भी ब्रह्म-मध्व-सम्प्रदायको अङ्गीकार किया है ।

अब यहाँ श्रीब्रह्म - माध्व - गौड़ीय सम्प्रदायकी भागवत - परम्पराके आचार्योंका संक्षेपमें परिचय दिया जा रहा है--

ब्रह्माजी--श्रीकृष्ण ही सर्वकारणकारण स्वयं भगवान् एवं धर्मके मूल हैं । इनके अंशांश पुरुषावतारके निश्वाससे अनादि "ब्रह्मविद्या" अर्थात् श्रुति समूह प्रकटित हैं । सृष्टिके प्रारम्भमें भगवान् स्वयं इस वेद-विद्याका उपदेश ब्रह्माजीको करते हैं।

देवर्षि नारद—ब्रह्माजीने परम भक्त अपने मानस पुत्र देवर्षि नारदजी को उस ब्रह्म विद्याका उपदेश किया । श्रीनारदजीने उन उपदेशोंका सार अपने भक्तिसूत्र और नारद पंचरात्र आदिमें ग्रथित किया। साथ ही चतुःश्लोकी भागवतके रूपमें उसका उपदेश भगवान् वेदव्यास को किया ।

श्रीवेदव्यास--शक्त्यावेशावतार श्रीव्यासदेवने वेद-मंत्रोंका संकलन कर विषयोंके अनुसार उन्हें ऋक्, साम, यजु और अथर्व—चार भागोंमें विभक्त किया, अष्टादश पुराणोंको प्रकटित किया, महाभारतकी रचना की तथा इन सबके समन्वयसे रूपमें वेदान्त सूत्र या ब्रह्मसूत्रकी रचना की। अन्तमें इनसे सन्तुष्ट नहीं होने पर श्रीनारदजीके उपदेशानुसार समाधि-लब्ध ब्रह्मविद्याके सार-स्वरूप श्रीमद्-

भागवतका प्रकाश किया। यह श्रीमद्भागवत—ब्रह्मसूत्रका अकृत्रिम भाष्य, महाभारतका तात्पर्य-निर्णय करनेवाला, गायत्रीका भाष्य तथा सम्पूर्ण वेदोंके सारभूत तात्पर्य द्वारा सम्वर्द्धित सर्वश्रेष्ठ अमल प्रमाण स्वरूप शब्द-ब्रह्मका मूर्त्तिमान स्वरूप है। यह वेद-रूप कल्पतरुका हेयांश वर्जित वह रसमय अमृतफल है, जिसे आस्वादन करने वाला अमर बन जाता है—भगवच्चरणारविन्दोंके प्रेमरूप अथाह समुद्रमें सदाके लिए निमज्जित हो जाता है। श्रीमद्भागवतमें श्रीभागवत धर्म (नामान्तर सनातन धर्म या आत्म-धर्म) रूप ब्रह्मविद्याका वर्णन है। यही जीवमात्रका धर्म है। यह ब्रह्म-सम्प्रदायका मूल-भूत सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रन्थ है। श्रीवेदव्यासने इसका उपदेश सर्वप्रथम शुकदेव मुनिको किया। कालान्तर-में उन्होंने बदरिकाश्रममें श्रीमध्वाचार्यको भी इसका उपदेश देकर ब्रह्मसूत्रके ऊपर भाष्य लिखकर जगत्-में शुद्धाभक्तिका प्रचार करने की आज्ञा दी।

श्रीमध्वाचार्य—ये दक्षिण भारतमें उड्पी ग्राममें ब्राह्मण वंशमें सन् १२३८ ई० में आविर्भूत हुए थे। ये वायुके अवतार (त्रेतामें हनुमान, द्वापरमें भीम, वे ही कलियुगमें मध्वाचार्य हैं) माने जाते हैं। बारह वर्षकी आयुमें संन्यास ग्रहण कर भारतके तीर्थोंमें भ्रमण करते हुए बदरिकाश्रममें हुए। इनकी भक्तिसे सन्तुष्ट होकर भगवान् व्यासदेवने इनको दर्शन देकर भागवत धर्मका उपदेश किया तथा कृपापूर्वक दीक्षा देकर स्वकृत ब्रह्मसूत्रके ऊपर भाष्यकी रचना कर भागवत धर्म-प्रचारकी आज्ञा दी। तदनन्तर मध्वाचार्यने वहाँसे लौटकर ब्रह्मसूत्रके ऊपर अणुभाष्य (बृहद्), अणुभाष्य (संक्षिप्त), अणु व्याख्यानम्, गीताभाष्य, तत्त्व-विवेक, ऋक्-भाष्य, ईश-केन आदि ग्यारह प्रधान उपनिषदोंके भाष्य, भागवत-तात्पर्य, महाभारत-तात्पर्य आदि उच्च ग्रन्थोंकी रचना की। श्रीमध्व सम्प्रदायमें बहुत प्रचारित इस निम्नलिखित श्लोकमें श्रीमध्व-सिद्धान्तोंका संक्षेपमें उल्लेख पाया जाता है—

श्रीमन्मध्वमते हरिः परतमः सत्यं जगत्तत्त्वतो
भेदो जीवगणा हरेरनुचरा नीचोच्चभावं गताः।
मुक्तिर्नैजसुखानुभूतिरमला भक्तिश्च तत्साधन-
मक्षादित्रितयं प्रमाणमखिलानाम्नायैकवेद्यो हरिः॥

श्रीमध्वाचार्यके मतसे श्रीहरि—कृष्ण ही परम-तत्त्व हैं; जगत सत्य है; ईश्वर जीव, और जड़में परस्पर तत्त्वतः नित्यभेद है, जीव-समूह श्रीहरिके अनुचर अर्थात् सेवक हैं, जीवोंमें परस्पर अधिकार-का तारतम्य वर्त्तमान है, स्वरूपगत आनन्दकी अनु-भूति (विष्णवांघ्रिलाभः मुक्ति) ही मुक्ति है, अमला भक्ति ही श्रीकृष्णके चरणकमलोंमेंकी सेवाकी प्राप्ति रूप मुक्तिकी प्राप्तिका एकमात्र साधन है, शब्द, अनुमान और प्रत्यक्ष—ये तीन प्रमाण हैं, श्रीहरि अर्थात् श्रीकृष्ण ही अखिल-आम्नायवेद्य अर्थात् सम्पूर्ण वेदोंके और वेदमूलक शास्त्रोंके प्रतिपाद्य तत्त्व हैं।

मध्व सम्प्रदायका प्रधान मठ उड्पी (दक्षिण भारत) में है तथा उसके पास ही उसके चतुर्दिक और भी ८ शाखामठ हैं। श्रीमध्वाचार्यके पश्चात् विभिन्न विद्वान एवं योग्य आचार्योंने उनके सिद्धान्तों-का तथा उपासना प्रणालीका शिष्य-परम्परासे भारत-में सर्वत्र ही प्रचार किया है और कर रहे हैं।

श्रीपद्मनाभ तीर्थ—(सन् १३१८–१३२४ ई०) ये मध्वाचार्यके शिष्य एवं सम्प्रदायके प्राचीन टीकाकार थे। इन्होंने मध्वाचार्यके दश प्रकरण, अणुभाष्य, गीताभाष्य आदि ग्रन्थोंकी टीकाएँ लिखी हैं।

श्रीनरहरितीर्थ—(१३२४–१३३३ ई०) श्रीमध्वाचार्यके शिष्य हैं। इनके द्वारा रचित १५ ग्रन्थ बतलाये जाते हैं। सभी अप्राप्य हैं।

श्रीमाधवतीर्थ-(१३३३ ई.-४० ई.) श्रीमध्वाचार्यके पश्चात तृतीय आचार्य हुए तथा उन्हींके शिष्य थे। इन्होंने ऋक्, साम और यजुर्वेद के ऊपर टीकाएँ लिखी हैं।

श्रीअक्षोभ्यतीर्थ—(१३४०-६५ ई.) श्रीमध्वाचार्यके शिष्य थे। इन्होंने माध्वतत्त्वसार-संग्रह नामक एक ही ग्रन्थकी रचना की। इन्होंने शृंगेरी मठाधीश प्रसिद्ध विद्वान शंकरामतावलम्बी विद्यारण्यको शास्त्रार्थमें पराजित कर अद्वैतवाद रूपी वृक्षको समूल उखाड़ फेंका था। इस शास्त्रार्थके मध्यस्थ थे-श्रीरामानुज सम्प्रदायके प्रसिद्ध आचार्य वेदान्त देशिकाचार्य।

श्रीजयतीर्थ—उत्तरादिमठके मठाधीश थे। इन्होंने न्यायसुधा, तत्त्व-प्रकाशिका, दश-प्रकरण टीका, षट्प्रश्न टीका, ईशावास्य टीका, गीताभाष्य टीका, गीता-तात्पर्य टीका, भागवत-तात्पर्य टीका आदि अनेक ग्रन्थोंकी रचना कर अद्वैतवादकी धज्जियाँ उड़ाकर तत्त्ववादकी पुष्टि की है।

जयतीर्थके पश्चात क्रमशः श्रीज्ञानसिन्धुतीर्थ, श्रीदयानिधितीर्थ, और श्रीविद्यानिधितीर्थ (१४३५-४४ ई.) सम्प्रदायके आचार्य हुए। इनके शिष्य श्रीराजेन्द्रतीर्थ और उनके शिष्य श्रीजयधर्मतीर्थ हुए। श्रीजयधर्मतीर्थके शिष्य श्रीपुरुषोत्तमतीर्थ और उनके शिष्य श्रीब्रह्मण्यतीर्थ हुए।

श्रीव्यासतीर्थ या श्री व्यासराय—(१४६० ई. १५३९ ई.) ये श्रीब्रह्मण्यतीर्थके शिष्य और सम्प्रदायके अतिशय प्रतिभाशाली धुरन्धर विद्वान् आचार्य थे। ये विजयनगरके राजा श्रीकृष्णदेवाचार्यके गुरु थे। इन्होंने तर्क-ताण्डव, तात्पर्य चन्द्रिका, न्यायामृत, खण्डनत्रय-मन्दारमंजरी और तत्त्वविवेक मंदारमंजरी आदि ग्रन्थों की रचना कर अद्वैतवादियोंकी सत्ताको ही जगत्से मिटा देनेका उपक्रम कर दिया। श्रीजीव गोस्वामीने तत्त्वसन्दर्भमें श्रीविजयध्वजतीर्थ एवं श्रीव्यासतीर्थको वेद-वेदार्थ विद-श्रेष्ठ कहा है तथा 'सर्वसम्वादिनी' और वैष्णवतोषणीमें 'न्यायामृत'-ग्रन्थका उल्लेख किया है।

श्रीलक्ष्मीपतितीर्थ और श्रीमाधवेन्दपुरी—(लगभग १४०० ई. आविर्भावकाल) श्रीव्यासतीर्थके पश्चात् श्रीलक्ष्मीपतितीर्थ आचार्य हुए। इन श्रीलक्ष्मीपतितीर्थके ही शिष्य हैं—माधवेन्द्रपुरी। लक्ष्मीपतितीर्थसे ही श्रीमाधवेन्द्रपुरीकी शाखा प्रकट हुई। यहाँ यह शंका हो सकती है कि मध्वसम्प्रदायके संन्यासी तो तीर्थ उपाधियुक्त होते हैं, फिर माधवेन्द्र जी मध्वसम्प्रदायके अन्तर्गत होनेपर भी पुरी कैसे हो गए? उक्त शंकाका समाधान इस प्रकार है। श्रीलक्ष्मीपतितीर्थ उत्तरादिमठके मठाधीश थे। मध्वसम्प्रदायमें नौ मठ हैं—(१) उत्तरादि, (२) मालमार, (३) आदमार, (४) कृष्णपुर, (५) पुत्तगे,

(६) शीरुरु, (७) सौदे, (८) कानुर और (९) पेजावर। इनमेंसे केवल उत्तरादि मठका ही सम्बन्ध उत्तर भारतसे था। इस सम्प्रदायमें ऐसा नियम है कि प्रत्येक मठमें एक मठाधीश और दूसरा उनका उत्तराधिकारी—ये दो ही संन्यासी वर्तमान रहते हैं। तीसरे किसी को संन्यास नहीं दिया जाता। दूसरी बात, उस समय वे लोग कुछ संकीर्ण विचार के कारण किसी भी उत्तर भारतके व्यक्तिको किसी भी हालतमें संन्यासवेश (अनाधिकारी मानकर) न देते थे। श्रीमाधवेन्द्रजी बंगालमें आविर्भूत हुए थे। श्रीलक्ष्मीपतिके दीक्षित शिष्य होने पर भी तथा बार-बार अनुरोध करने पर भी उनको उत्तरादि मठाधीशसे उनको संन्यास वेश न मिला। तब अंत में उन्होंने श्रीमन्मध्वाचार्यका आदर्शानुसरण कर किसी 'पुरी' उपाधिधारी दसनामी (शंकर-सम्प्रदायी) संन्यासीसे संन्यास-वेश ग्रहण कर लिया। परन्तु इससे वे शंकर सम्प्रदायी संन्यासी नहीं कहे जा सकते। क्योंकि यदि श्रीमध्वाचार्य एक शंकर-पन्थी दसनामी संन्यासीसे एकदण्ड संन्यास ग्रहण कर भी वैष्णव संन्यासी कहे जा सकते हैं, तब केवल श्रीमाधवेन्द्रपुरीको ही उसी प्रकार शंकरानुयायी एकदण्डी संन्यासीसे संन्यास वेश ग्रहण करनेके कारण मध्वसम्प्रदायके अन्तर्भुक्त माननेमें बाधा क्या है ? वैष्णव-संन्यासमें तो १०८ नामोंको ग्रहण करनेकी विधि है। फिर 'पुरी' तो प्रसिद्ध दशनामों के अन्तर्गत पड़ता है। श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने भी उसी प्रकारसे श्रीईश्वर पुरीसे दीक्षा लेकर पीछेसे श्रीमाधवेन्द्रपुरीके दीक्षित शिष्य (परन्तु किसी 'भारती' उपाधिधारी शंकर संन्यासीसे संन्यास वेश प्राप्त) श्रीकेशव भारतीसे संन्यासवेश ग्रहण किया था, परन्तु इससे उनको कोई मायावादी संन्यासी नहीं कहता। उसी प्रकार माधवेन्द्रपुरीजी भी माध्व-मतानुयायी वैष्णव संन्यासी ही थे, क्योंकि साम्प्रदायिक शिष्यत्वमें दीक्षाका ही अधिक महत्व है, न कि वेशका। दीक्षागुरु और संन्यास-वेशदाता एक व्यक्ति भी हो सकते हैं, किसी अवस्था में दो भी हो सकते हैं।

श्रीमाधवेन्द्रतुरीजी उस प्रेमामर-वेलिके प्रथम अंकुर माने जाते हैं (श्रीचैतन्यचरितामृत)। जिस प्रेम रूपी अमर वेलिके पूर्णरूपेण पल्लवित-पुष्पित एवं फलोंसे युक्त तथा अपने सौरभसे विश्वको प्रमुदित करनेवाली अवस्था श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी हैं। इन श्रीमाधवेन्द्रपुरीने ही श्रीगिरिराज गोवर्द्धन पर प्रसिद्ध श्रीगोपाल (श्रीनाथजी) की स्थापना कर सेवा-पूजाकी व्यवस्था की थी। तदनन्तर यह श्रीविग्रह श्रीनाथद्वारामें श्रीवल्लभसम्प्रदायके गोस्वामियोंके द्वारा आज भी सेवित हो रहे हैं। श्रीमाधवेन्द्रपुरी विद्वान एवं रसिक भक्त चूरामणि थे। वे विप्रलंभ रसके प्रथम आचार्य माने जाते हैं। पद्यावलि आदि ग्रन्थोंमें इनके अनेक पद्य पाये गये हैं। श्रीईश्वरपुरी, और श्रीअद्वैताचार्य इन्हींके शिष्य थे। श्रीनित्यानन्द प्रभुजी श्रीलक्ष्मीपतितीर्थके शिष्य होने पर भी गुरुभ्राता श्रीमाधवेन्द्रपुरीके प्रति गुरुबुद्धि रखते थे।

श्रीईश्वरपुरीजी (१४३६ ई)—ये श्रीमाधवेन्द्रपुरीजीके दीक्षित एवं संन्यासी शिष्योंमें सर्व-प्रधान थे। स्वयं भगवान् श्रीगौरसुन्दरने गयामें इन्हींके निकट दीक्षा ग्रहण करनेकी लीला प्रकट की थी। ये प्रेमामर वेलिके किंचित् पल्लवित पौध माने जाते

हैं। ये सर्वदा भगवत् प्रेमावेश में रहा करते थे। इनके द्वारा रचित 'श्रीकृष्णलीलामृत'-ग्रन्थ भक्तिरसका एक उच्चकोटिका ग्रन्थ माना जाता है। श्रीरूप-गोस्वामीकृत पद्यावलीमें इनके कतिपय श्लोक पाये जाते हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभुजी (आविर्भावकाल सन् १४८६) —ये अवतारी पुरुष, स्वयं भगवान् श्रीनन्दनन्दन कृष्ण ही हैं, जो आश्रय जातीय श्रीराधाभाव—उन्नत उज्ज्वल मधुर रसका आस्वादन कर जगत्में उसका दान करनेके लिये निज अभिन्न पराशक्ति महाभावरूपिणी श्रीमती राधिकाके भाव और कान्तिसे सुचलित होकर अवतीर्ण हैं। ये श्रीनवद्वीप धामके अन्तर्गत श्रीमायापुर (गंगाके पूर्वी तट पर) में आविर्भूत हुए थे। पिताका नाम श्रीजगन्नाथमिश्र और माताका नाम श्रीशचीदेवी हैं। २४ वर्ष तक गृहस्थलीलामें नाना-प्रकारकी अद्भुत लीलाओं द्वारा सबको कृष्ण-प्रेम प्रदान करते हुए गयामें ईश्वर पुरी-पादसे दीक्षा ग्रहण कर तथा अन्तमें कटवामें श्रीमाधवेन्द्र पुरीके दीक्षित किन्तु शांकर सम्प्रदायके किसी 'भारती' संन्यासी द्वारा संन्यास ग्रहण करनेवाले केशव भारतीसे संन्यास ग्रहण कर (पहले केशव भारतीके कानोंमें स्वयं मन्त्र श्रवण कराकर) प्रेमावेश में मत्त होकर शान्तिपुर होते हुए कुछ पार्षदोंके साथ जगन्नाथपुरी धाम पधारे। वहाँ शङ्कर सम्प्रदायके प्रकाण्ड विद्वान श्रीसार्वभौम भट्टाचार्यको—जो सारे भारतमें शांकर वेदान्तके अद्वितीय पारंगत पण्डित माने जाते थे—कुछ ही घंटोंके शास्त्रार्थमें पराजित कर उन्हें परम प्रेमी भक्त एवं अपना अनुयायी बना लिया। तदनन्तर छः वर्ष तक दक्षिण और उत्तर भारत मथुरा-वृन्दावनमें कुछ दिन रहकर वृन्दावन, राधाकुण्ड, काम्यवन आदि स्थानोंको प्रकट करते करते हुए सर्वत्र भ्रमण करते समय काशीके ६०००० मायावादी संन्यासियोंको तथा उनके गुरु प्रकाशानन्द सरस्वतीको—जो उत्तर भारतमें शङ्करमतके सर्वश्रेष्ठ एवं प्रख्यात वेदान्ती आचार्य माने जाते थे—शास्त्रार्थमें पराजित कर उन्हें उनके शिष्योंके साथ वैष्णव बना दिया, बंगालके नवाबके प्रधान मंत्री श्रीसनातनको काशीमें तथा गृहमंत्री श्रीरूपको प्रयागमें क्रमशः वैधी एवं रागानुगाभक्तिका उपदेश देकर तथा उनमें शक्ति-संचार कर उन दोनोंको व्रजके लुप्त तीर्थोंको उद्धार करने, श्रीविग्रहोंको प्रकट करने तथा साम्प्रदायिक ग्रन्थोंकी रचना की आज्ञा दी। इन्होंने सर्वत्र ही हरिनाम-संकीर्तन एवं शुद्धभक्तिका प्रचार किया। संन्यासके अन्तिम १८ वर्ष पुरीमें ही महाभावावेशमें बीता। इसी समय समग्र भारतके वैष्णव भक्त एवं आचार्यगण इनके दर्शनों तथा उपदेशोंके लिये पुरी पधारे। इस अवस्थामें इनमें महाभावके अधिरूढ़ और अन्यान्य सर्वोच्च प्रेमके जो विकार आदि लक्षित हुए, वे श्रीमद्-भागवत आदि लीलारसके उत्कृष्ट ग्रन्थोंमें अथवा पूर्वाचार्योंमें या भगवतवतारोंमें—कहीं भी लक्षित नहीं हुए हैं। इनके भावों एवं सिद्धान्तोंको श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीरूप-सनातन-जीव गोस्वामियों, श्रीकृष्णदास कविराज, विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर, श्रीबलदेव विद्याभूषण आदि पार्षदोंने अपने-अपने-ग्रन्थोंमें संग्रह किया है। निम्नलिखित श्लोकमें इनके सिद्धान्तों का संक्षेपमें परिचय पाया जाता है—

आम्नायः प्राह तत्त्वं हरिमिह परमं सर्वशक्ति रसाब्धि तद्भिन्नांशांश्च जीवान् प्रकृति-कवलितान् तद्विमुक्तांश्च भावात्। भेदाभेद-प्रकाशं सकलमपि हरेः साधनं शुद्धभक्ति साध्यं तत् प्रीतिमेवेत्युपदिशति जनान् गौरचन्द्रः स्वयं सः॥*

श्रीमन्महाप्रभुकी ये दस शिक्षाएँ हैं—

(१) आम्नाय-वाक्य ही प्रधान प्रमाण है। उनके द्वारा निम्नलिखित नौ सिद्धान्त प्रतिपादित होते हैं—

(२) कृष्णस्वरूप हरि ही परम तत्त्व हैं।

(३) वे सर्व-शक्तिमान हैं।

(४) वे अखिल रसामृत-समुद्र हैं।

(५) जीव-समूह हरिके विभिन्नांश तत्त्व हैं।

(६) तटस्थगठन वशतः जीवसमूह बद्ध दशामें प्रकृति द्वारा बद्ध हैं।

(७) तटस्थगठन वशतः जीवसमूह मुक्तदशामें माया प्रकृतिसे मुक्त हैं।

(८) जीव-जड़ात्मक अखिल विश्वका हरिसे युगपत् भेद और अभेद है।

(९) शुद्ध भक्ति ही जीवके लिये एकमात्र साधन है।

(१०) शुद्ध-कृष्ण-प्रीति ही जीवके लिये साध्य है।

श्रीमन्महाप्रभुका दार्शनिक सिद्धान्त "अचिन्त्य-भेदाभेद" के नामसे प्रसिद्ध है। उपासना जगत्में उन्नत-उज्ज्वल राधाभावकी पारकीय-विप्रलंभ रसमयी उपासना श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी एक विशेष देन है। यह पद्धति सम्प्रदायमें 'श्रीरूपानुग भजन-पद्धति'के नामसे प्रसिद्ध है। श्रीमन्महाप्रभुके सिद्धान्तों एवं उपासना प्रणालीका प्रचार छः गोस्वामियोंने विशेष-रूपसे किया है।

श्रीस्वरूपदामोदर गोस्वामी—ये श्रीमन्महाप्रभुके मुख्य अन्तरंग पार्षद थे। कोई भी पद, ग्रन्थ, काव्य या नाटकादि पहले इनको दिखलाकर पीछे इनकी स्वीकृति होने पर श्रीमन्महाप्रभुजीको सुनाया जाता था। श्रीमहाप्रभुजीकी अंतिमलीलामें महाभावावेशकी अवस्थामें ये सर्वदा उनके पास रहते तथा उनके भावों एवं अद्भुत चरित्रोंको कड़चों (फुटकर श्लोकों) में लिपिबद्ध कर रखते थे। ये कड़चे ही "श्रीचैतन्य-चरितामृत" एवं श्रीमन्महाप्रभु सम्बन्धी ग्रन्थोंके मूल उपादान हैं।

श्रीरूप एवं सनातन गोस्वामी—दोनों भाई पहले बंगालके नवाब हुसेनशाहके मंत्री थे। श्रीमन्महाप्रभु-की कृपा प्राप्त कर संसार छोड़कर वृन्दावनमें रहकर उनके आनुगत्यमें भजन करते थे। सनातन गोस्वामी (आविर्भावकाल १४१० शकाब्द) श्रीरूप (आवि-र्भावकाल १४११ शकाब्द) सगे भाई थे। श्रीमन्महाप्रभुद्वारा शक्ति संचरित होकर इन्होंने उनकी आज्ञासे लुप्तप्राय व्रजमण्डलके लुप्ततीर्थों (कृष्णकी लीला स्थलियों) को प्रकट किया, श्री-भगवत् विग्रहोंकी स्थापना कर सेवा-पूजाकी व्यवस्था की तथा श्रीमन्महाप्रभुके सिद्धान्तोंके प्रतिपादक अनेकानेक ग्रन्थोंकी रचनाएँ की है। श्रीसनातन गोस्वामीने (१) बृहद्भागवतामृत, (२) श्रीहरिभक्ति-

* श्रीभक्तिविनोद ठाकुर कृत 'श्रीमन्महाप्रभुरशिक्षा' पृष्ठ ५ में।

विलास, (३) श्रीकृष्णलीला-स्तव, और (४) बृहद् वैष्णव तोषणी (भागवत १० म् स्कन्धकी टीका) आदि ग्रन्थोंकी रचनाकी है। श्रीरूपगोस्वामीके अनेक ग्रन्थोंमें से—ललितमाधव, विदग्ध माधव, भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि, लघुभागवतामृत, उद्धव-संदेश, हंसदूत, गोविन्दविरुदावलि, मथुरा माहात्म्य, पद्यावलि, राधाकृष्णगणोद्देशदीपिका, निकुञ्जरहस्यस्तव, दानकेलि-कौमुदी, नाटक-चन्द्रिका आदि प्रमुख हैं। श्रीरूपगोस्वामी श्रीचैतन्यमनोभीष्ट स्थापक आचार्य होनेके कारण इस सम्प्रदायको श्रीरूपानुग सम्प्रदाय भी कहा जाता है।

श्रीजीव गोस्वामी (आविर्भावकाल १४५२ शकाब्द —श्रीरूप-सनातनके छोटे भाई श्रीअनुपमके पुत्र तथा श्रीरूपगोस्वामीके शिष्य थे। अद्भुत तेजस्वी, प्रखर मेधावी एवं प्रकाण्ड एवं अद्वितीय दार्शनिक विद्वान आचार्य थे। काशीमें श्रीमधुसूदन वाचस्पति के पास वेद-वेदान्त-उपनिषद और अन्यान्यशास्त्रोंका विधिवत् अध्ययन कर वृन्दावनमें श्रीरूप-सनातनके श्रीचरणोंमें श्रीमद्भागवत और अन्यान्य भक्ति ग्रन्थोंका अध्ययन किया। श्रीरूप-सनातनके पश्चात् गौड़, व्रज एवं क्षेत्र मण्डलके गौड़ीय-वैष्णव सम्प्रदायके सार्वभौम आचार्यपद पर प्रतिष्ठित हुए। इन्होंने वृन्दावनमें श्रीराधा-दामोदर श्रीविग्रहकी सेवा प्रकट की है। इन्होंने अनेकानेक ग्रन्थोंकी रचना की है। ये ग्रन्थसमूह गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके सिद्धान्तों के प्रकाशस्तंभ हैं, जिनमें इनकी दार्शनिक विद्वता पाठकोंको पद-पद पर आश्चर्यचकित करती है। इनके ग्रन्थोंमेंसे कुछ प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं—षट्सन्दर्भ, सर्वसंवादिनी, हरिनामृत व्याकरण, सूत्रमालिका, धातु-संग्रह, भक्तिरसामृतशेष, श्रीमाधवमहोत्सव, श्रीगोपालचम्पू, संकल्पकल्पवृक्ष, श्रीगोपालविरुदावलि, गोपाल-तापनी टीका, ब्रह्मसंहिता टीका, रसामृत टीका, उज्ज्वल टीका, गायत्री-भाष्य, क्रम-सन्दर्भ (भागवतकी टीका) श्रीराधाकृष्णार्चन दीपिका आदि।

श्रीरघुनाथदास गोस्वामी (आविर्भावकाल १४२८ शकाब्द)—श्रीस्वरूप दामोदरके प्रियपात्र श्रीरूपानुग भजनके मूर्त्तिमान विग्रह एवं श्रीमन्महाप्रभुके पार्षद तथा छः गोस्वामियोंमें अन्यतम थे। धनाढ्य जमींदारके एकमात्र संतान होकर भी युवावस्थामें ही सब कुछ छोड़कर श्रीगौरसुन्दरके चरणोंमें पुरी उपस्थित हो गये। श्रीमन्महाप्रभुने इनको श्रीस्वरूप दामोदरके हाथोंमें सौंप दिया। इनका वैराग्य एवं भजन निष्ठा प्रसिद्ध एवं आदर्शस्थानीय है। उनके रचित ग्रन्थ हैं—श्रीस्तवावली, श्रीदानचरित, और श्रीमुक्ताचरित।

श्रीकृष्णदास कविराज—श्रीरूप-रघुनाथ एवं श्रीजीवगोस्वामीके प्रियपात्र श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी सम्प्रदायके रसिक एवं दार्शनिक विद्वान आचार्य हैं। वे अप्राकृत कविकुल सम्राट होनेके कारण 'कविराज' नामसे प्रसिद्ध हैं। इनका आविर्भाव बंगालके बर्दमान जिलेके झामटपुरमें सन् १४९६ ई. में हुआ था। इन्होंने श्रीचैतन्यचरितामृत, श्रीगोविन्दलीलामृत एवं सारंगरंगदा (कृष्णकर्णामृत टीका) आदि ग्रन्थोंकी रचना की। 'श्रीचैतन्यचरितामृत' इनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है, जो इनकी विपुल उज्ज्वल कीर्तिका सर्वप्रधान आधारपीठ है तथा वैष्णवोंके गलेका हार है।

श्रीनरोत्तमदास ठाकुर—ये श्रीमन्महाप्रभुके कृपा

पात्र व्रजमण्डलके प्रसिद्ध भजनपरायण संत श्रीलोकनाथ गोस्वामीके दीक्षित शिष्य थे। श्रीजीव गोस्वामीके निकट साम्प्रदायिक शास्त्रों एवं भजन-प्रणालीकी शिक्षा मिली थी। श्रीनिवासाचार्य एवं श्रीश्यामानन्द प्रभु इनके जीवन-सङ्गी थे। इन तीनोंने मिलकर गोस्वामी ग्रन्थोंको बंगालमें लाकर उनका सर्वत्र प्रचार किया। इन्होंने श्रीमन्महाप्रभुके पश्चात् सारे बङ्गालको ही नहीं, मणिपुर, आसाम, उड़ीसा और व्रजमण्डलको भी हरि-संकीर्तनकी बाढ़में पुनः अप्लावित कर दिया। बंगालके राजशाही जिलेमें खेतुरी नामक ग्राममें राज परिवारमें ईशाकी सोलहवीं शताब्दीमें इनका आविर्भाव हुआ था। ठाकुर महाशयकी रचनाओंमें "प्रार्थना एवं प्रेमभक्ति चन्द्रिका" प्रसिद्ध है। कीर्तनके गड़ानहाटी नामक स्वरके प्रवर्तक हैं। ये नित्यानन्दकी शक्तिके रूपमें प्रसिद्ध हैं। खेतुरीमें इनके द्वारा स्थापित श्रीविग्रहोंकी सेवा-पूजा होती है।

श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर—ये सम्प्रदायके अद्वितीय रसिक एवं प्रकाण्ड दार्शनिक आचार्य थे। साथ ही परम भक्त एवं श्रेष्ठ वैष्णव कवि चूड़ामणि थे। इन्होंने वृन्दावनमें श्रीगोकुलानन्दजीकी सेवा प्रकट की है। ये बंगालके नदिया जिलेमें देवग्राममें १६६० शकाब्दमें आविर्भूत हुए थे। इन्होंने स्वरचित अनेक ग्रन्थोंसे गौड़ीय वैष्णव-साहित्यके भण्डारकी वृद्धि की है। रचित ग्रन्थ—श्रीकृष्णभावनामृत, श्रीगौराङ्गलीलामृत, ऐश्वर्य कादम्बिनी, स्तवामृतलहरी, सिन्धु-बिन्दु, उज्ज्वलकिरण, भागवतामृतकण, रागवर्त्मचन्द्रिका, माधुर्यकादम्बिनी, चमत्कार-चन्द्रिका आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त श्रीभागवतकी सारार्थदर्शिनीटीका, गीताकी सारार्थवर्षिनी टीका, उज्ज्वलनीलमणिकी आनन्द-चन्द्रिका टीका, भक्तिरसामृतसिन्धुकी भक्तिसार - प्रदर्शिनी - टीका, ब्रह्मसंहिता टीका, चैतन्यचरितामृत-टीका आदि अनेकों टीकाओंकी रचना की है।

श्रीबलदेव विद्याभूषण—ये गौड़ीय वेदान्ताचार्यके नामसे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने पुरीमें पण्डित राधादामोदरसे तथा वृन्दावनमें श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरके आनुगत्यमें साम्प्रदायिक ग्रन्थोंका अध्ययन किया। उड़ीसाके बालेश्वर जिलेमें रेमुनाके निकटवर्ती किसी ग्राममें इनका ईशाकी १८वीं शताब्दीमें आविर्भाव हुआ था। ये श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीकी वृद्धावस्थामें उनकी आज्ञानुसार जयपुरमें साम्प्रदायिक-विवादमें स्वसम्प्रदायका पक्ष समर्थनके लिए पधारे तथा वहाँ पर अन्यान्य सम्प्रदायके आचार्योंको विराट सभामें निरुत्तर कर गौड़ीय वैष्णवोंकी लुप्तप्राय प्रतिष्ठाकी पुनः स्थापना की। उस शास्त्रार्थके समय उन्होंने श्रीगोविन्दजीके कृपादेशसे ब्रह्मसूत्रके ऊपर श्रीगोविन्द भाष्यकी रचना कर गौड़ीय वैष्णवोंका मुख उज्ज्वल किया। ये बड़े प्रख्यात नैयायिक एवं वैदान्तिक पण्डित एवं प्रतिभाशाली आचार्य थे। गोविन्दभाष्यके अतिरिक्त षट् सन्दर्भकी टीका, लघु-भागवतामृतकी टीका, सिद्धान्तरत्न, वेदान्त-स्यमन्तक, प्रमेयरत्नावली, सिद्धान्त - दर्पण, नाटक - चन्द्रिका, श्यामानन्दशतक-टीका, साहित्यकौमुदी, काव्य-कौस्तुभ, छन्द कौस्तुभ, वैष्णवानन्दिनी (भागवतकी टीका) गोपालतापनी एवं गीताका भाष्य एवं अन्यान्य ग्रन्थोंकी रचना कर इन्होंने गौड़ीय वैष्णव-साहित्यकी प्रचुर सेवा की है।

श्रीजगन्नाथदास बाबाजी—अपने समयके गौड़-व्रज-क्षेत्रमण्डलके गौड़ीय-वैष्णव सम्प्रदायके सार्वभौम आचार्य हुए हैं। ये लगभग १४० वर्ष तक जगतमें प्रकट रहे। पहले व्रजमें भजन करते थे। पीछे गौड़ मण्डलमें कुलिया नवद्वीपमें भजन कुटी बनाकर भजन करते थे। इन महापुरुषने ही श्री-चैतन्य महाप्रभुके लुप्तप्राय जन्मस्थान श्रीमायापुर (गङ्गाके पूर्वी तट पर स्थित) को प्रकट किया। इन्होंने श्रील भक्तिविनोद ठाकुरको सम्प्रदाय-रहस्य, भजन-प्रणाली एवं शास्त्रके निगूढ़ तत्त्वोंका उपदेश प्रदान कर उन्हें शुद्धाभक्ति प्रचारके लिये उत्साहित किया था।

श्रीसच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकुर—आधुनिक युगमें श्रीमन्महाप्रभुके आचरित एवं प्रचारित विशुद्ध भागवतधर्मके प्रचारके मूल पुरुष हैं। विशाल गौड़ीय-साहित्यका सृजन कर भक्ति-धाराको पुनः प्रबल वेगसे प्रवाहित करनेके कारण ये सप्तम गोस्वामीके नामसे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने पूर्वाचार्योंके संस्कृत ग्रंथों-का सहज सरल बोल-चालकी भाषाओंमें अनुवाद कर, टीका एवं भाष्य कर, उनका सार संग्रह कर लगभग १०० ग्रंथोंकी रचना कर गौड़ीय वैष्णव साहित्यको समृद्ध कर दिया है। इनकी कृपासे उच्च-शिक्षित एवं संभ्रान्त लोग इस सम्प्रदायमें प्रविष्ट हुए हैं। इन्होंने श्रीजीव गोस्वामीके पश्चात् श्रीविश्व-वैष्णव राजसभाका पुनः सञ्चालन किया, पारमार्थिक मासिक—श्रीसज्जनतोषिणीका प्रकाशन किया और देशमें सर्वत्र भ्रमण कर शुद्धभक्तिका प्रचार किया। नदिया जिला (बंगाल) के उला नामक ग्राममें १८३८ ई० में इनका आविर्भाव हुआ था। समग्र विश्वमें गौड़ीय मठ-मिशनोंके प्रतिष्ठाता एवं प्रचारक आचार्यसिंह श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती "प्रभुपाद" इन्हीं महापुरुषके पुत्ररत्न हैं। इन्होंने श्री-जगन्नाथ बाबाजी महाराजके निर्देशानुसार श्रीगौर-जन्म-भूमिका प्रकाश किया। इनके द्वारा रचित ग्रन्थोंमें जैवधर्म, चैतन्यशिक्षामृत, श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षा, श्रीनवद्वीपधाम-माहात्म्य, आम्नायसूत्र, प्रेम-प्रदीप, बौद्ध-विजयकाव्यम्; श्रीकृष्णसंहिता, कल्याण-कल्पतरु, शरणागति, गीतावली तत्त्वसूत्र, श्रीगौराङ्गस्मरणमङ्गल-स्तोत्रम्, श्रीहरिनाम-चिन्ता-मणि, नवद्वीपभावतरङ्ग, अमृतप्रवाहभाष्य (चैतन्यचरितामृतका), गीताभाष्य, ईशोपनिषद् भाष्य, तत्त्वमुक्तावलि, श्रीभागवतार्कमरीचिमाला, विजनग्राम काव्य, नाम-भजन, Life and precepts of Mahaprabhu आदि प्रसिद्ध हैं।

श्रीगौरकिशोरदास बाबाजी—अतिशय वैराग्य-वान् एवं भजन परायण सिद्ध महात्मा थे। पहले व्रजमण्डलमें तत्पश्चात गौड़मण्डलमें भजन करते उच्च स्वरसे हरिनाम कीर्तन करते थे। श्रील भक्ति-विनोद ठाकुरके अतिशय प्रियजन थे। इनके ही शिष्य श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती ठाकुर हैं, जिन्होंने भारत एवं विदेशोंमें भी गौड़ीय वैष्णव धर्मका प्रचार किया है।

श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती 'प्रभुपाद'—विश्व भरमें गौड़ीय मठ-मिशनोंके प्रतिष्ठाता, प्राच्य एवं प्रातीच्य अनेकों भाषाओंके ज्ञाता, प्रकाण्ड दार्शनिक, ज्योतिषी, अद्वितीय वाग्मी, अनुसंधानप्रिय एवं अत्यन्त प्रतिभाशाली गौड़ीय वैष्णवाचार्य थे। ८ फरवरी सन् १८७४ ई० शुक्रवार माघी कृष्णा-

पञ्चमीको जगन्नाथपुरीमें आविर्भूत हुए थे। पिता-माताका नाम श्रील भक्तिविनोद ठाकुर और श्रीभगवतीदेवी था। बचपनसे ही इनमें भगवद्भक्तके लक्षण लक्षित होते थे। अल्प अवस्थामें ही संस्कृत, अंग्रेजी एवं बङ्गलाके प्रतिष्ठित विद्वान् होकर श्रील भक्तिविनोद ठाकुरके निकट समस्त वैष्णव-ग्रंथोंका अध्ययन किया और उनकी आज्ञासे शुद्धभक्ति-प्रचारके कार्यमें जुट गये। इन्होंने श्रीगौरकिशोरदास बाबाजीसे दीक्षा ग्रहण कर पीछे त्रिदण्ड संन्यास ग्रहण किया था। इन्होंने गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायमें श्रीमन्महाप्रभुजीके पश्चात् त्रिदण्ड संन्यासकी धाराका प्रवर्त्तन किया, दैव-वर्णाश्रम धर्मकी स्थापना की, देश-विदेशोंमें योग्य त्रिदण्डी संन्यासियोंको भेज कर श्रीमन्महाप्रभुके सिद्धान्तोंका प्रचार किया, विश्व-वैष्णव-राजसभाका पुनः गठन किया, गोस्वामियोंके लुप्तप्राय ग्रंथोंका पुनः प्रकाशन किया, श्रीनवद्वीप-धाम, व्रजमण्डल, गौड़मण्डल, क्षेत्रमण्डलकी परिक्रमाका पुनः प्रचलन किया; श्रीमन्महाप्रभुके आविर्भाव-स्थल श्रीमायापुर योगपीठमें विशाल मंदिर, श्रीचैतन्य मठ, भक्तिविनोद विद्यालय, संस्कृत पाठशाला, कलकत्तेमें विशाल गौड़ीय मठ तथा भारतके सारे बड़े तीर्थ स्थानों एवं बड़े नगरोंमें गौड़ीय मठकी स्थापना की, हिन्दी में—भागवत, बङ्गलामें—दैनिक नदियाप्रकाश, साप्ताहिक एवं मासिक गौड़ीय, संस्कृतमें सज्जनतोषणी तथा अंग्रेजीमें हारमोनिस्ट एवं अन्याय भाषाओंमें भी मासिक पत्रोंके प्रकाशन द्वारा सर्वत्र ही शुद्धभक्तिका प्रचार किया। इतना ही नहीं, इन्होंने अनेक ग्रंथों, भाष्यों, टीकाओंकी रचना कर तथा शिष्योंको प्रेरित कर उनसे भी अनेक ग्रंथोंका सृजन करवा कर गौड़ीय वैष्णव साहित्य भण्डारको अतीव समृद्ध किया है। इस प्रकार इन्होंने अपनी अलौकिक विद्वता, अकाट्य शास्त्रयुक्ति, प्रखर प्रतिभा एवं शास्त्र-प्रमाणोंके बल पर भक्ति विरुद्ध कर्मी, ज्ञानी, मायावादी एवं अन्यान्य कुमतोंके कुसिद्धान्तोंका खण्डन कर श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रेम-धर्मका अति अल्प-कालमें ही सर्वत्र प्रचार कर दिया। इनकी रचनाओंमें ये प्रसिद्ध हैं—श्रीचैतन्यचरितामृतका अणुभाष्य, श्रीचैतन्य भागवतका गौड़ीय भाष्य, भागवतकी विवृत्ति, भक्तिसंदर्भका गौड़ीय भाष्य, वेदान्त तत्त्वसार, प्रमेय-रत्नावली, श्रीचैतन्य भागवतका अंग्रेजी अनुवाद, ब्रह्मसंहिताका अंग्रेजी अनुवाद आदि। इनके अतिरिक्त नवद्वीप पञ्जिकाका प्रकाशन किया। श्रीभक्तिविनोद ठाकुरके जैवधर्म, चैतन्य शिक्षामृत आदि सैकड़ों ग्रंथोंको पुनः प्रकाशित किया।

वर्तमान अधस्तनवर—जगद्गुरु श्रीश्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती "प्रभुपाद"के अन्तरङ्ग प्रिय पार्षद एवं अधस्तनवर परिव्राजकाचार्य १०८ श्रीश्रीमद्-भक्तिप्रज्ञानकेशव गोस्वामी श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय सम्प्रदायके संरक्षक, श्रीमन्महाप्रभुकी परम्परामें दशम आचार्य हैं। ये श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके मूल मठ (श्रीनवद्वीप धाममें) श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठ तथा भारत व्यापी अन्यान्य शाखा मठोंके संस्थापक एवं नियामक आचार्य हैं। ये प्रकाण्ड दार्शनिक पण्डित, वेदान्तके अद्वितीय पारंगत विद्वान, प्रखर वाग्मी, ज्योतिषी, सम्प्रदाय रहस्यविद्

तथा प्रतिभाशाली आचार्यकेशरी हैं। श्रील "प्रभुपाद"के अप्रकट लीलाविष्कारके पश्चात् श्रीसारस्वत-गौड़ीय-वैष्णव-धारामें जो शिथिलता आ गयी थी, उसमें इन महापुरुषने ही नव जीवनका संचार किया है। इन्होंने भारतके अनेक स्थानोंमें नये-नये मठों और शुद्धभक्तिप्रचार-केन्द्रोंकी स्थापना कर, अनेक भाषाओंमें मासिक पत्रोंका प्रकाशन कर पूर्वाचार्योंके ग्रंथोंका पुनः मुद्रण कराकर, योग्य-योग्य त्रिदण्डि संन्यासियों-ब्रह्मचारियोंको भक्तिप्रचारके लिये नाना स्थानोंमें भेजकर गौड़-व्रज-क्षेत्र-मण्डलकी परिक्रमा का पुनः प्रचलन कर, संस्कृत विद्यालय आदिकी स्थापना कर, स्वयं अनेक ग्रंथोंकी रचना कर क्रमशः सम्प्रदायका गौरव बढ़ाते हुए सर्वत्र श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीका प्रचार कर रहे हैं। इनकी रचनाओंमें—मायावादकी जीवनी, अचिन्त्यभेदाभेद - तत्त्व, श्रीबलदेव विद्याभूषणके गीता - भाष्यका बङ्गला अनुवाद आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने श्रीश्रीराधाविनोदविहारी-तत्त्वाष्टकम, श्रीतुलसी-वन्दना, श्रीप्रभुपादकी आरती, श्रीश्रीगुरुगौराङ्ग-राधाविनोदविहारीजीकी मङ्गलारति आदि अनेक स्तव-स्तोत्रोंकी रचना की है। अभी अनेक ग्रंथोंके प्रकाशनकी योजनाएँ चल रही हैं।

हम आज इनकी ६७वीं वार्षिकी आविर्भाव तिथिके अवसर पर उनके अभय चरणकमलोंमें अपनी आंतरिक श्रद्धारूपी पुष्पांजलि अर्पणकर उनके माध्यमसे सारे पूर्वाचार्योंके चरणोंमें भी हार्दिक श्रद्धा अर्पण करते हैं। क्योंकि शास्त्रोंके अनुसार श्रीवेदव्यासके आसनकी सेवा करता हुआ, उनके आनुगत्यमें श्रीभागवत धर्मका आचार-प्रचार करनेवाला उनकी परम्परामें स्थित वर्तमान आचार्यकी की पूजा ही उन सबकी पूजा है। उसे ही दूसरे शब्दोंमें श्रीव्यास पूजा या श्रीगुरु पूजा कहते हैं। हम पुनः उनके श्रीचरणकमलोंमें असंख्य दण्डवत् प्रणाम निवेदन करते हैं।

—संपादक

———

मदीश्वर परमाराध्यतम ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रीश्रीमद्भक्ति प्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज
की परम पुनीत आविर्भाव तिथि-पूजाके
उपलक्ष्यमें दीन-हीन सेवककी

श्रीगुरु-वन्दना

बंदौं श्रीगुरु पद-कमल, सुमिरत ही कल्याण ।
जासु कृपा अंधा लखे, सुने सकल बिन कान ॥
पंगु चढ़इ गिरिवर गहन, मूक मधुर सुर गाय ।
ऐसे श्रीगुरु-चरण पर, हरिदास बलि जाय ॥
रूपानुग आचार्य वर, प्रेम भक्ति की खान ।
कृष्ण नाम विह्वल नित, चरण भक्ति दो दान ॥
भक्ति प्रज्ञान केशव चरण, धोइ करो पुनि पान ।
हरिदास भव तरण को, और उपाय न जान ॥
प्रभुपाद के परम प्रिय, गौर शक्ति अवतार ।
प्रेम भक्ति वितरत सदा, बन्दौं बारं-बार ॥

श्रीगुरु-कृपा प्रार्थी—
सेवकाधम—
हरिदास

———

आचार्य

[साप्ताहिक गौड़ीयसे उद्धृत]

श्रीभगवानने उद्धवसे कहा है—"आचार्यं मां विजानीयात्"—अर्थात् आचार्यको मेरा ही स्वरूप अथवा प्रकाश समझो । भगवान मायाधीश हैं। माया उनको स्पर्श नहीं कर सकती। साधारण जीव मायाद्वारा आवृत होते हैं, किन्तु भगवत्स्वरूप नित्य पार्षद-लोकोत्तर आचार्यगण सर्वदा मायासे मुक्त होते हैं। वे भगवान्‌की भाँति मायाको दूर कर आत्म-धर्मकी प्रतिष्ठा करते हैं । अचिन्त्य शक्ति-सम्पन्न लीलामय भगवान् जब प्रपंचमें अवतीर्ण होकर अपनी विविध प्रकारकी लीलाओंका प्रकाश करते हैं, उस समय उन्हींकी अचिन्त्य शक्तिके प्रभाव से उनकी लीलाकी पुष्टिके लिए मायादेवी नानाप्रकार के रूपोंमें प्रकट होती हैं। वे, कभी भोग और मोक्ष की कामना रखनेवाले कपट गुरु रूप पूतनाके रूपमें कभी असत् संस्कार, असत् सिद्धान्त, जड़ता और अभिमान रूप भारको ढोनेवाले शकटके रूपमें, कभी पाण्डित्याभिमान, कुतर्क और शुष्क जड़ीय युक्तिरूपी तृणावर्तके रूपमें, कभी कपटता, शठता और अत्याचरण रूपी बकासुरके रूपमें, कभी ऐश्वर्यमद जन्य निष्ठुरता, हिंसा और नाना-प्रकारके व्यसन रूपी यमलार्जुनके रूपमें, कभी अज्ञजवादी होकर शुद्ध भक्तजनको पीड़ित करनेवाले दावानलके रूपमें, कभी कर्मजड़ता और वर्ण-अभिमानके कारण भक्त और भगवान्‌की अवज्ञा करनेवाले याज्ञिक ब्राह्मणोंके रूप में, कभी बहु-ईश्वरवाद और स्वतंत्रदेवता-पूजा रूपी इन्द्रयज्ञके रूपमें प्रकटित होकर व्यतिरेक भावसे भगवानकी लीलाकी पुष्टि करती हैं। भगवानने भी नन्द मोचन लीला द्वारा मायावाद रूप सर्पके मुखसे शुद्धा भक्तिकी रक्षाकर, मणि-उद्धार लीलाद्वारा प्रतिष्ठाशा और स्त्रीसङ्ग स्पृहा रूप शंखचूड़का वधकर, केशीवध लीला द्वारा मूर्त्तिमान कपटताका वध कर मायाकी विचित्रताका विनाश किया है। इस प्रकार भगवान भक्तोंकी शिक्षाके लिए तथा शरणागत-भक्तों की निष्ठाको सुदृढ़ करनेके लिए जगतमें मायाकी विचित्रताओंको प्रकट करा कर स्वयं उनका ध्वंश करते हैं।

भगवानके अभिन्नस्वरूप लोकाचार्यगण जब भगवान द्वारा प्रेरित होकर धर्मकी ग्लानिको दूर करने के लिए इस जगत्‌में आगमन करते हैं, उस समय उनके प्रचार कार्यमें व्यतिरेक रूपसे सहायता करने वाली मायाके ये दूत-समूह विभिन्न रूपोंमें सामने उपस्थित होते हैं। सच्चे आचार्यको मायाकी ये विचित्रताएँ तनिक भी मोहित नहीं कर पातीं। बल्कि इसके विपरीत आचार्य उनका स्वरूप पहचान कर उनको दूर भगानेमें या विनष्ट करनेमें समर्थ होते हैं। आचार्य शास्त्र-वाणी रूप खड्गसे इन अनर्थ रूपी असुरोंका विनाशकर शरणागतोंकी रक्षा करते हैं। आचार्योंके अतीत इतिहासकी आलोचना करने से इस विषयका सुस्पष्ट प्रमाण पाया जा सकता है। पद्मपुराण आदि सात्वत शास्त्रोंमें आचार्य शंकरके

आचार्यत्वको नैमित्तिक बतलाया गया है। इसका कारण यह है कि वे भगवान्‌की आज्ञासे असुरोंको मोहित करनेके लिए अवतरित हुए थे। जब बौद्ध वेदोंके प्रति अपना विश्वास खोकर सच्चिदानन्द-विग्रह सर्वकारण-कारण परमेश्वरकी सत्ताके प्रति भी संदिग्ध होकर शून्यवादी हो पड़े, उस समय प्रच्छन्न बुद्ध शंकरके रूपमें भगवानकी आज्ञासे अवतीर्ण हुए। शून्यवादियोंके सामने सबसे पहले सच्चिदानन्द श्रीमूर्त्ति भगवानको उपस्थित करने पर वे उन्हें ग्रहण करनेके अधिकारी न होंगे, इसलिए सर्वप्रथम वेदोंके प्रति उनका विश्वास स्थापन करा कर फिर वेदोंके माध्यमसे ब्रह्मका निर्विशेष अस्तित्व स्वीकृत होने पर पीछेसे योगमाया द्वारा समावृत अतिशय निगूढ़ अचिन्त्य अप्राकृत सच्चिदानन्दाकार सविशेष विग्रह उनकी श्रद्धाका विषय बन सकता है। ऐसा सोचकर आचार्य शंकरने "नास्ति" शब्दसे चिर-अभ्यस्त व्यक्तियोंके निकट 'अस्ति' शब्दको उपस्थित किया है। इसीलिये शंकराचार्यका आचार्यत्व नैमित्तिक है, ठीक उसी प्रकार भगवानकी मौषल लीला नैमित्तिक और असुरोंको मोहित करने के लिए है, भगवानके शरणागत भक्तजनोंने आचार्य शंकरके इस गूढ़ उद्देश्यकी उपलब्धि तो की; किन्तु दूसरे मोहित हो पड़े।

आचार्य शंकरके तिरोभावके पश्चात् भारत भूमि में चार सात्त्वत आचार्य आविर्भूत हुए हैं। इन्होंने सारे मनोधर्मोका खण्डन कर आत्मधर्मका अर्थात् भगवद्भक्ति धर्मका प्रचार किया है। इस आत्मधर्म प्रचार कार्यमें उनको पूर्वाचार्यों द्वारा प्रचारित मतों के विरुद्ध प्रचार करना पड़ा। इसलिये उनको अनेकानेक अत्याचारोंका सामना करना पड़ा। आचार्य श्रीरामानुजको जानसे मार डालनेका प्रयत्न किया गया। श्रीमध्वाचार्यके ग्रन्थोंको विरुद्धवादियोंने चुरा लिया। परन्तु इतना सताये जानेपर भी सात्त्वत आचार्यगण मनोधर्मोको तनिक भी प्रश्रय नहीं दिया, अधिकन्तु सर्वदा उनके विरुद्ध कमर कसे रहे। सैकड़ों वर्षोंके संचित कुसंस्कार और मनोधर्म रूप समुद्रके अतल गर्भमें लोग भेड़ियाधसानकी भाँति अबाध गतिसे प्रवेश करते हैं, परन्तु आचार्यगण अप्रिय सत्यका ढोल पीट-पीट कर उन लोगोंको सावधान करते हैं। परन्तु सात्त्वत आचार्योंकी वह ध्वनि केवलमात्र भक्ति-उन्मुख सुकृति-सम्पन्न संसार क्षयोन्मुख जीवोंके कर्णरन्ध्रोंमें ही प्रवेश करती है। ये आचार्यगण सैकड़ों विघ्न-बाधाओंके विद्यमान रहने पर भी आत्म धर्मकी निरस्तकुहकं—अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष आदि की कामनाओंसे रहित सत्यवाणीका प्रचार करते हैं। श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुकी आचार्यलीलामें भी हम देख पाते हैं कि उन्होंने अपने समयके प्रचलित सारे मनोधर्मोका शास्त्र प्रमाणोंसे खण्डन कर आत्म धर्मकी प्रतिष्ठाकी थी। इस विषयमें श्रीचैतन्य-चरितामृतमें कहा गया है—

तार्किक मीमांसक यत मायावादिगण।
सांख्य पातञ्जल स्मृति पुराण आगम॥
निज-निज शास्त्रोद्‌ग्राहे सबइ प्रचण्ड।
सर्व मत दुषि प्रभु करे खण्ड खण्ड॥
तर्क प्रधान बौद्ध शास्त्र नवमते।
तर्केई खण्डिल प्रभु, ना पारे स्थापिते॥

सात्वत आचार्यगण मायाके किसी भावको आश्रय नहीं देते। उनको लोकानुबन्ध, शिष्यानुबन्ध, स्वजनानुबन्ध, देशसमाजानुबन्ध आदि नहीं होता अर्थात् किसीकी भी वे अपेक्षा नहीं रखते; क्योंकि वे निरपेक्ष सत्यके एकनिष्ठ उपासक होते हैं। इसलिए श्रीमन्महाप्रभुने अपने प्रिय शिष्य छोटे हरिदासका त्याग किया और अद्वैताचार्यप्रभुने अपने भगवत्-विमुख पुत्रोंका त्याग कर दिया। श्रीअद्वैताचार्यने तो हरिदास ठाकुरको श्राद्धके अवसर पर सर्वप्रथम श्राद्धपात्र प्रदान कर प्रबल स्मार्त्त समाजका भी त्याग करनेका आदर्श दिखलाया है। हरिदास ठाकुरने अपने प्रतिकूल समाजका वर्जन कर दिया, उनके अत्याचारोंको हँसते-हँसते सहा, श्रीनरोत्तम ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभु शूद्र कुलमें आविर्भूत होकर भी बहुतसे ब्राह्मण-शिष्योंको दीक्षित करके यह दिखला दिया कि परमहंस वैष्णवगण ब्राह्मणोंके भी गुरु हो सकते हैं। जिस समय स्मार्त्त ब्राह्मणगण शुद्ध वैष्णवोंके प्रति जातिबुद्धि कर अपराध-समुद्रमें डूब रहे थे, उस समय श्यामानन्द प्रभुके शिष्य रसिकानन्द प्रभु द्विजातियोंको नारद पञ्चरात्र, भरद्वाज संहिता, श्रीहरिभक्तिविलास, सत्क्रियासारदीपिका, आदिके विधानों एवं संस्कारोंद्वारा तथा श्रीमहाभारत और श्रीमद्भागवत पुराण आदिके सुस्पष्ट आदेशोंके अनुसार उपनयन संस्कार द्वारा संस्कृत कर यह प्रमाणित कर दिया कि वैष्णवोंमें पारमार्थिक ब्राह्मणत्वका अभाव नहीं होता। इसीलिए गोपीवल्लभ-पुरके रसिकानन्द प्रभुके वंशमें बड़गाछी निवासी नवमी होड़के वंशमें और श्रीखण्ड निवासी रघु-नन्दनके वंशमें दीक्षित शिष्योंका उपनयन संस्कार अति प्राचीनकालसे चलता आ रहा है। गौड़ीय वेदान्ताचार्य श्रीपाद बलदेव विद्याभूषण करण जातिमें पैदा होकर भी उपनयन-संस्कारसे संस्कृत हुए थे।

इस नये युगके प्रारम्भमें पाश्चत्य शिक्षा और दीक्षाके विषमय फलस्वरूप जब सनातन धर्मका क्षीण दीपालोक बुझने-बुझनेको हो रहा था, जब पाश्चात्य धर्मके अनुकरण द्वारा सनातन धर्मके नाम पर ब्राह्म धर्मका प्रचार चल रहा था, सच्चिदानन्द श्रीविग्रहकी अवज्ञा की जा रही थी, सदाचारको घृणाकी दृष्टिसे देखा जा रहा था पुनर्जन्मवादको अस्वीकार किया जा रहा था, परमार्थको केवल कल्पनामूलक बतलाया जा रहा था, शुद्ध भक्तिके अङ्गोंके प्रति अश्रद्धाका दूषित वातावरण प्रस्तुत किया जा रहा था, शुष्क नैतिकसज्जा पर बौद्धके नास्तिक्यवादका प्रचार हो रहा था, कहीं-कहीं पर शङ्करमतावलम्बीगण असम्प्रदायिकताके नाम पर धर्म-समन्वयवादका प्रचार कर श्रीविग्रहको प्राकृत सत्त्वका विकार बतला रहे थे, एकमात्र परम उदार वैष्णव धर्मको साम्प्रदायिक संकीर्ण धर्म बतला रहे थे, आत्माके धर्म भक्तिको मन और शरीरका धर्म बतलाकर उसे ज्ञान और कर्मके सापेक्ष मान रहे थे, जिस समय सुनिर्मल वैष्णव धर्ममें भी संकीर्णता एवं साम्प्रदायिकता रूप विद्वेषकी दावाग्नि प्रवेश करने लगी थी, अशिक्षित इन्द्रियपरायण व्यक्तियोंके स्वकपोलकल्पित नानाविध मतसमूह—आउल, बाउल, कर्त्ताभजा, नेड़ा, दरवेश, प्राकृत सहजिया, कर्म जड़, स्मार्त्त, जाति गोसाईं, अति-बाड़ी, गौराङ्गनागरी, लम्पटबाबाजी-सम्प्रदाय,

माताजी-सम्प्रदाय आदि वैष्णव धर्ममें प्रवेश कर बाहरी क्रियाओं तथा प्राकृत आचारको ही वैष्णव धर्म होनेका प्रचार कर रहे थे, उस समय भगवान द्वारा प्रेरित एक दिव्य सूरिने एक उच्च संभ्रान्त वंश-में प्रादुर्भूत होकर उच्च पाश्चात्य शिक्षामें शिक्षित तथा राजकार्यमें उच्च पद पर प्रतिष्ठित होकर भी वज्र-गंभीर स्वरमें घोषणा की—"असत्सङ्ग त्याग ही वैष्णव आचार है।"

उपर्युक्त शिक्षाकी घोषणा करनेवाले हैं—स्वनाम धन्य आचार्यरत्न श्रीभक्तिविनोद ठाकुर। उन्होंने लगभग एक सौ ग्रन्थोंकी रचनाएँ कर, सामयिक मासिक पत्रिकाओंके प्रकाशन, लुप्ततीर्थोंके उद्धार तथा आदर्श जीवन-यापनद्वारा इस नये युगमें श्रीमन्महाप्रभुके प्रचारित आत्मधर्म रूप शुद्धभक्तिका प्रचार किया है। उनके शुद्ध-भक्तिके प्रचारसे सनातन धर्मका बुझता हुआ दीपक पुनः उज्ज्वल हो उठा। उन्होंने अपने पश्चात् इस प्रचारकी बागडोर एक महातेजस्वी महापुरुषके हाथोंमें सौंपी, जिन्होंने सारे भारतमें ही नहीं, अधिकन्तु सारे विश्वमें सनातन धर्मका आलोक फैला दिया। ये महापुरुष हैं—ॐविष्णुपाद परमहंसकूल चूड़ामणि अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी महाराज। कृत्रिम लीलास्मरण मार्ग, गृहव्रतधर्म, भागवत पाठके बदले अर्थ ग्रहण, हरिनाम विक्रय, श्रीविग्रह दर्शनके समय भेंट ग्रहण तथा उसके द्वारा कुटुम्बादिका भरण-पोषण, भागवतादि पाठके समय कपट अश्रु-सात्त्विक भावोंका प्रदर्शन, शुद्ध वैष्णवोंमें जातिबुद्धि करना, वैष्णवोंमें ब्राह्मणताका अभाव दर्शन, गोस्वामीत्वको जातिमें आबद्ध रखना, वैष्णवी-दीक्षाको व्यवसायके रूपमें बदलना आदि कार्योंद्वारा वैष्णव समाजका पतन देखकर उनका कोमल हृदय द्रवित हो उठा। ऐसा देखकर वे घरमें रह न सके। उन्होंने श्रीमद्भागवतोक्त (एकादश स्कन्ध) अवन्ति-नगरीके त्रिदण्डि भिक्षु, त्रिदण्डी वैष्णव आचार्य श्रीरामानुज, गौड़ीय वैष्णवाचार्य त्रिदण्डि स्वामी श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी भाँति संन्यासी वेश धारण कर वज्र-गंभीर स्वरसे उपर्युक्त व्यभिचारों और दुराचारोंके विरुद्ध व्यापक रूपसे प्रचार करना आरम्भ कर दिया। इतना ही नहीं उन्होंने उपयुक्त शिष्योंके द्वारा भारत और भारतके बाहर विदेशोंमें भी आत्म-धर्मका प्रचार कर श्रीगौर सुन्दरकी श्रीमुखनिःसृत वाणी—"पृथ्वी ते आछे यत नगरादि ग्राम। सर्वत्र प्रचार हइबे मोर नाम॥" को सफल बना दिया।

जिन व्यक्तियोंने आत्म-समर्पण कर उन आचार्यके श्रीचरणकमलोंमें बैठनेका सुयोग प्राप्त किया है, उन्होंने प्रत्यक्ष रूपसे यह उपलब्धि की है कि माया देवी चाहे जिस प्रकारका मोहिनी रूप धारण कर उनके समीप क्यों न आये, वे तत्क्षण ही उसे पहचान लेते थे तथा शास्त्रीय प्रमाण एवं युक्तियोंके बल पर उनका मूलच्छेद कर प्रणतजनोंको उसका स्वरूप प्रदर्शन करा देते थे। शिष्यानुबन्ध, जनानुबन्ध और समाजानुबन्ध उनको तनिक भी स्पर्श नहीं कर पाते थे। वे मनोधर्मशील जगतके सारे लोकमतोंके विरुद्ध प्रचारक थे। जो लोग मनो-धर्मी जगतकी दृष्टिमें महापुरुष, परम धार्मिक और कर्मवीरके रूपमें प्रसिद्ध थे, वे लोग वास्तवमें आत्म-धर्मकी दृष्टिमें कितना अल्प मूल्य रखते हैं—इसका उन्होंने सुन्दर विवेक जगतको प्रदान किया है। वे निरपेक्ष सत्यके प्रचारक थे। श्रीमद्भागवतमें भी निरपेक्ष सत्यका उद्घाटन करते हुए जैमिनी, मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत और पराशर आदिको संकेत कर कहा गया है—

प्रायेण वेद तदिदं न महाजनोऽयं
दिव्या विमोहितमतिर्बत मायया लम्।
त्रय्यां जड़ीकृतमतिर्मधुपुष्पितायां
वैतानिके महति कर्मणि युज्यमानः॥
(श्रीमद्भा० ६।३)

श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः

श्रीश्रीरूपानुग-ब्रह्म-माध्व-गौड़ीय सम्प्रदायैक संरक्षक ॐ विष्णुपाद परमहंस परिव्राजकाचार्यवर्य अष्टोत्तरशत श्री

श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी

निखिल भुवनमङ्गलमयी श्रीश्रीयुक्ता सप्तषष्ठितम वर्षपूर्त्ति आविर्भाव-तिथि पूजाके उपलक्षमें

श्रीआचार्यदेवकी कृपा-वैशिष्ट्य-कुसुम चयनिका

नमो ॐ विष्णुपाद श्री-भक्तिप्रज्ञान केशव ।
श्रीप्रभुपाद प्रेष्ठाय गौरपार्षद रूपिणे ॥
श्रीचैतन्यमनोभीष्ट परिपूरक मूर्त्तये ।
गौर-सारस्वताम्नाय आचार्याय नमो नमः ॥
गूढ़ानुरागिणे तुभ्यं श्रीसिद्धान्तसरस्वती ।
श्रीगौर-करुणा-शक्ति-स्वरूपाय नमो नमः ॥
श्रीरूपानुगसिद्धान्तविपक्षिमुखमर्द्दिने ।
कृष्ण-तत्वज्ञ-सम्राजे कृतिरत्नाय ते नमः ॥

(१) हे श्रील सरस्वती गोस्वामी "प्रभुपाद" के मनोभीष्टपूरक तदीय परम प्रिय पार्षद एवं अधस्त-नवर ! जगद्गुरु श्रील प्रभुपादके तिरोभाव-लीला-विष्कारके पश्चात् रूपानुग-सारस्वत-गौड़ीय-धाराको नाना-प्रकारके विघ्न-बाधाओंसे पूर्ण बड़े ही विहड़ पथसे अग्रसर होना पड़ा। श्रीप्रभुपादके निष्कपट सेवकोंकी कठोर परीक्षा हुई, जिसकी अपनी एक बड़ी करुण-कहानी है। उस समय श्रील प्रभुपाद द्वारा स्थापित गौर-वाणी-प्रचार-केन्द्रसमूह क्रमशःबन्द होने लगे, उनके द्वारा प्रकाशित गौड़ीय, भागवत, हारमोनिस्ट, सज्जनतोषणी आदि बंगला, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी परमार्थिक पत्रोंका प्रकाशन बन्द हो गया, शुद्धभक्तिके ग्रन्थोंका मुद्रण करनेवाले मुद्रण-यंत्र-रूप वृहद् मृदंगका विश्वव्यापी स्वर बन्द हो गया, श्रीधाम नवद्वीप-परिक्रमा व्रजमण्डल एवं क्षेत्रमण्डल आदिकी परिक्रमाएँ लुप्त हो गयीं, कोमल-श्रद्ध मठवासी ब्रह्मचारी आदि मठ-जीवनका परि-त्याग कर निराश्रित हो अपने-अपने पूर्वाश्रमको लौटने लगे, कुछ-कुछ ब्रह्मचारी और संन्यासी छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर एकान्तमें निर्जन भजनमें किसी प्रकार निष्क्रिय जीवन कटाने लगे। सबमें निष्क्रियता और किंकर्त्तव्यताका भाव ओत-प्रोत

हो गया था। सारस्वत्-गौड़ीय-वैष्णवोंके ऐसे दुर्दिन में आपने श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिकी स्थापना कर श्रील 'प्रभुपाद' के स्वप्नादेशसे श्रीमन्महाप्रभुके संन्यास-लीला-क्षेत्र श्रीकटवामें त्रिदण्डसंन्यास-ग्रहण-लीलाका आविष्कार कर श्रील प्रभुपादकी मनोभीष्ट सेवा गौर-वाणी-प्रचारका दृढ़ संकल्प ग्रहण किया और अवरुद्ध सारस्वत-धाराके मुहानेको उन्मुक्त कर उसे सारे बंगालमें ही नहीं, बिहार, आसाम, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश आदि सारे भारत भर में प्रवाहित कर दिया। आपने ही सबसे पहले लुप्त श्रीनवद्वीप धाम-परिक्रमाका पुनः प्रचलन किया, आपने ही सबसे पहले लुप्त श्रीगौड़ीय पत्रिका--पारमार्थिक मासिक पत्रिकाका पुनः प्रकाशन आरम्भ किया, आपने ही सबसे पहले व्रजमण्डल, क्षेत्रमण्डल, द्वारका धाम, बद्रीनारायण धाम, नैमिषारण्य और दक्षिण भारतके पुण्य-स्थलियोंकी परिक्रमाका पुनः प्रचलन कर उसके माध्यमसे सर्वत्र गौर-वाणी-प्रचारका सूत्रपात किया। आपके इन भक्ति-प्रचार-कार्योंसे अनुप्राणित और उत्साहित होकर आपके सतीर्थ-गुरु भ्राताओंने भी आपका अनुसरण किया। इस प्रकार लुप्त-प्राय सारस्वत- वैष्णव धाराको पुनः गति प्रदान करनेके कारण सारा सारस्वत गौड़ीय वैष्णव-सम्प्रदाय आपका चिर-ऋणि है और रहेगा। आपके कोटिचन्द्र-सुशीतल अभय पादपद्मोंमें पुनः पुनः नमस्कार है।

(२) श्रीगौर - पार्षद श्रीलसरस्वती गोस्वामी ठाकुरकी शुद्धाभक्ति-वाणीका श्रवण करके विरहोन्मत्त होकर अति कोमल कैशोरावस्थामें ही जो स्नेहमयी माताकी ममता, बन्धु - बान्धुओंका मोह, राजोपम विराट ऐश्वर्य-सम्पति एवं मानका लोभ और उच्च शिक्षाका व्यामोह—सब कुछको तृणकी भाँति परित्याग कर श्रीगुरुचरणोंमें अपनेको पूर्णरूपेण समर्पित कर उनके परम प्रिय बन गये, श्रीगौर-वाणी-प्रचारके प्रारम्भिक दिनोंमें जब कि श्रीप्रभुपाद के समीप दो-चार ही मठवासी थे, उस समय श्रील प्रभुपादजीने विश्वभरमें शुद्ध भक्ति-प्रचार केन्द्रोंकी स्थापनाकी विराट योजना बनाते हुए जिनके सम्बन्धमें बड़ी दृढ़तासे यह कहा था कि"यह विनोद इन केन्द्रों-को संभालेगा", जिनको श्रील प्रभुपाद अपने अंतरंग और निगूढ़ सेवाकार्योंमें नियुक्त करते थे, जिन पर प्रसन्नहोकर उन्होंने तदीय अंतरंगता-सूचक "कृतिरत्न" इन भक्तिसूचक आशिर्वादवाणीसे भूषित किया था, कुलियाके धर्मविरोधी पाखण्डियोंके अत्याचारके समय जिन्होंने श्रीगुरु सेवाके लिये श्रीरामानुजाचार्यके प्रधान शिष्य आदर्श गुरुसेवक श्रीकुरेशकी गुरु-सेवाकी पुनरावृत्ति की थी, भक्ति विरोधी विभिन्न दुर्दान्त लोगों एवं वर्गोंका दमन कर श्रीगुरुमनोभीष्ट श्रीगौर-नाम, श्रीगौरधाम और गौरकामकी जिन्होंने विभिन्न प्रकारसे सेवा की थी और अभी भी कर रहे हैं, उन श्रीगुरुश्रेष्ठ, आचार्य वर के श्रीचरण कमलोंमें कोटि-कोटि नमस्कार है।

(३) श्रीप्रभुपादकी अप्रकट-लीलाविष्कारके पश्चात् अपनी प्रथम श्रीधाम-परिक्रमाके समय गुरु-वैष्णव - विरोधी, कुलाङ्गारोंद्वारा श्रीमन्महाप्रभुके आविर्भाव स्थान योगपीठमें नाना-प्रकारसे अत्याचार किये जाने पर भी जिन्होंने तरोरिव सहिष्णुता का परिचय दिया है, संन्यास-वेशदाता द्वारा अकारण ही नाना-प्रकारकी अतिशय तीक्ष्ण कटु-

क्तियोंको सहकर तृणादपि सुनीच, मानद एवं अमानी का परमोच्च आदर्श दिखलाया है, जिसे उनके सतीर्थ गुरुभ्रातागण वर्णन करते-करते विस्मत एवं आश्चर्य-चकित हो पड़ते हैं, जिन्होंने अपने आश्रित एकनिष्ठ गुरुसेवक अनंगमोहन ब्रह्मचारीकी अल्पसेवा से ही सन्तुष्ट होकर उन्हें कृष्ण-प्रेम और कृष्णधाम प्रदान कर आश्रित रक्षा एवं आश्रित-वात्सल्यका जाज्वल्यमान आदर्श रख छोड़ा है, जिसका स्मरण होने पर अत्यन्त शुष्क काष्ठ-पाषाणवत हृदय भी द्रवित हो उठता है, जो अपने आश्रितोंका तनिक कष्ट भी देखकर विकल हो उठते हैं, जो उन्हें कृष्ण-सम्बन्ध-विज्ञानसे समृद्ध करनेके लिये सदाचेष्टाशील रहते हैं, उन गौरकरुणाके घनविग्रह, 'कर्तनीय सदा हरिः'के मूर्तिमान विग्रहाचार्य ! आपके श्रीचरण कमलोंमें हम अपना सर्वस्व न्योछावर करते हैं।

(४)जिन्होंने अपने पूर्वाचार्योंके समस्त वैशिष्ट्यों को अपने अन्दर क्रोड़ीभूत करके भी अपना पृथक वैशिष्ट्य एवं मौलिकत्व उज्ज्वलित रखा है, 'वेदान्त सूत्रका तात्पर्य निर्विशेषज्ञान अर्थात मुक्तिसे है और शंकरवादी ही वेदान्ती हैं'—जनसाधारणकी इस साधारण भ्रान्तधारणा (Commen error) को दूर कर "वेदान्त सूत्रका यथार्थ एक मात्र तात्पर्य कृष्णभक्तिसे है तथा वैष्णवगण ही विशेषत: सारस्वत गौड़ीय वैष्णवगण ही यथार्थ वेदान्ती हैं—इस प्रकृत सत्यका प्रचार करनेके लिये श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिकी स्थापना की है, अपनी त्रिदण्डि-आम्नाय-परम्पराका वैशिष्ट्य संरक्षणके लिये पूर्वाचार्योंके वैशिष्ट्योंको अक्षुण्ण रखते हुए "भक्ति-वेदान्त" धाराका प्रवाश किया है, मायावाद और नाना प्रकारके अर्वाचीन भक्ति-विरोधी कुसम्प्रदायोंके खण्डन एवं स्वपक्ष मण्डनकी सर्वथा नवीन एवं अतिचमत्कारी अकाट्य सुयुक्तियोंकी उद्भावना की है, उन श्रीजीव-बलदेव-सरस्वती अभिन्न हे गौड़ीय वेदान्ताचार्य ! आपके श्रीचरणकमलोंकी हम बार-बार आरती उतारते हैं।

(५) जिन्होंने श्रील प्रभुपादके विरोधी साउड़ी-शालाकी भित्तिको अपने सुदृढ़ शास्त्रीय प्रमाण एवं प्रखर अकाट्य युक्तिरूप अस्त्रद्वारा खण्ड-खण्ड कर उड़ाकर श्रील प्रभुपाद एवं उनके प्रियजनोंका आनन्द-वर्द्धन किया है, जिन्होंने "मायावादकी जीवनी"में अपनी सर्वथा नवीन युक्तियों और शास्त्रीय प्रमाणोंके बल पर प्रच्छन्न बौद्ध रूप मायावादके गढ़को चूर्ण-विचूर्ण कर दिया है, जिन्होंने अपने "श्रीजन्माष्टमीकी दार्शनिक आलोचना", 'प्रदीप शिखा'—(प्रेम प्रदीप-की भूमिका), 'आमार वक्तव्य' (श्रीरूपानुग-भजन सम्पत्की भूमिका) 'सूम ओ चालिनी' आदि प्रबन्धोंमें अपने रूपानुगत्य तथा अद्भुत उद्भावनी शक्तिका परिचय दिया है, जिन्होंने 'निम्बादित्य और निम्बार्क एक ही व्यक्ति नहीं हैं', इस एक सार-गर्भिक छोटेसे प्रबन्धसे ही केवल निम्ब-रसका आस्वादन करनेवाले अर्वाचीनोंके युक्तिहीन समस्त प्रलापोंको स्तब्धीभूत कर दिया, जिन्होंने श्रीसारस्वत-गौड़ीय धाराके विरोधी गुरुद्रोही वासुदेव और सुन्दरानन्द तथा प्रवीण सहजिया हरिदासके मिलित कुसिद्धान्त रूप त्रिशिरासुरका अपने 'अचिन्त्य भेदा-भेद'—ग्रन्थ रूप महातीक्ष्ण त्रिशूलसे खण्ड-विखण्ड कर श्रील प्रभुपादकी मनोभीष्ट सेवा एवं सम्प्रदायकी रक्षाका महान कार्य किया है, जिन्होंने आसाम

प्रदेशके हँकर सम्प्रायके सर्वापेक्षा शक्तिशाली गढ़के भीतर एक विराट सभामें उनकी सारी कुयुक्तियोंका निर्भीक सिंहकी भाँति खण्डन कर श्रीचैतन्य महाप्रभुकी स्वयं-भगवत्ता एवं शुद्धाभक्तिकी स्थापना की है, जिन्होंने चुचुड़ाके अखिल बंगीय संस्कृत-सम्मेलनमें जनमतकी परवाह किये बिना भगवत्-विमुख कर्म-ज्ञान और मायावाद आदिका खण्डन कर शुद्धा कृष्णभक्तिकी स्थापना कर अपने निरपेक्ष सत्यका प्रचार करने वाले आचार्यत्वको प्रकाशित किया है, उन हे आचार्यकेशरी हम आपके श्रीचरण-कमलोंकी बार-बार वंदना करते हैं।

(६) श्रीरथ-यात्रा महोत्सवके समय श्रीचैतन्य चरितामृतसे श्रीरथयात्रा-प्रसङ्गका पाठ करते-करते विप्रलंभ रसात्मक भाव समुद्रमें निमज्जित होकर जो स्वयं रोदन करते हुए समस्त श्रोतृमण्डलीको रोदन कराते हैं, श्रीधाम मायापुरमें श्रील प्रभुपादके समाधि-मन्दिरमें श्रील प्रभुपादका गुणगान करते-करते ऐसा दैन्य प्रकाश करते हैं कि अति कठिन वज्रहृदय भी विगलित होकर नेत्रोंके मार्गसे प्रवाहित होने लगता है, उन विप्रलंभरसाम्बुधिस्वरूप रूप-रघुनाथानुग वाणी-श्रेष्ठ हे आचार्यवर ! आपके सर्वदेव वन्दित श्रीचरणकमलोंमें कोटि-कोटि प्रणाम है।

(७) जिन्होंने व्रजाभिन्न श्रीनवद्वीप धामके श्रीगोवर्द्धनाभिन्न श्रीकोलद्वीपके अन्तर्गत रासस्थलीसे अभिन्न प्रदेशमें समितिके मूल आकार मठराजमें धामेश्वर श्रीश्रीकोलदेवकी प्रतिष्ठा कर वहाँ परम चमत्कारमय अधिरूढ़ महाभावसुबलित महाविप्रलंभरसात्मक श्रीराधालिङ्गित श्रीश्रीराधाविनोद विहारीजीका प्रकाश कर जहाँ एक तरफ अपने श्रीरूपानुग आचार्यत्वको अपूर्वोज्ज्वल रूपमें प्रकाश किया है, वहाँ दूसरी ओर अपने महान् वैशिष्ट्य और मौलिकत्वका भी प्रकृष्ट निदर्शन किया है, हे रूपानुग आचार्य ! आप नित्यकाल जय युक्त हों।

(८) जिन्होंने "श्रील प्रभुपादकी आरती" नामक पद्यमें आदर्श गुरुनिष्ठा और सर्वोच्च गुरु तत्त्वका, "श्रीश्रीगौर गोविन्दकी मंगलारति" पद्यमें श्रीगौर-कृष्ण निष्ठाका, 'श्रीतुलसी आरति' पद्यमें श्रीवृन्दा-निष्ठा एवं "श्रीश्रीराधाविनोद विहारी तत्त्वाष्टक" में गुरु-निष्ठा, उपास्य तत्त्व, उपास्य-निष्ठा और अचिन्त्य-भेदाभेद तत्त्वका एकत्र ही अतिचमत्कार रूपसे प्रकाश किया है, जो गौड़ीय वैष्णव साहित्यकी महा-अमूल्य अमर निधियाँ हैं तथा जिनमें निगूढ़ दार्शनिक तत्त्व, अगाध पाण्डित्य, अतुलनीय रसिकता तथा विप्रलंभ रसावगाहिताका एकत्र ही श्रेष्ठ निदर्शन पाया जाता है, जिन्होंने पृथ्वी भरमें सर्वत्र श्रीचैतन्य वाणीका प्रचार करनेके लिए संकीर्त्तन महायज्ञका आयोजन किया है, उन आपके इस मनोऽभिष्ट पूरण महायज्ञकी हम भी एक साधारण समिध होकर भी आत्माञ्जलि प्रदान कर कर सकें—श्रीव्यासानुग आचार्यवर (आपके) श्रीचरणकमलोंमें भवदीय आविर्भाव तिथि-पूजाके अवसर पर हमारी यही कातर-प्रार्थना है। हे करुणा-वरुणालय श्रीश्रीआचार्यवर ! मैंने भवदीय अनन्त-असंख्य कृपा-वैशिष्ट्य रूप अगणित दिव्य-पुष्प-राशिमेंसे दो-एक पंखुड़ियोंका ही चयन कर गङ्गाजल से गङ्गापूजाकी भाँति भवदीय श्रीचरणोंकी पूजाका बाल-प्रयास मात्र किया है। आप कृपाकर हमारे हृदयमें अपनी अप्राकृत-वाणीकी स्फूर्ति कराकर अपनी मनोभीष्ट सेवामें अधिकार प्रदान करें।

कृपा प्रार्थी—

—त्रिदण्डि स्वामी भक्तिवेदान्त नारायण।

परमाराध्यतम श्रीश्रीगुरुपादपद्म ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति प्रज्ञान केशव
गोस्वामी महाराजकी शुभाविर्भाव-तिथिके अवसर पर उनके
श्रीचरणकमलोंमें दीन-हीन दासाधमकी

पुष्पाञ्जलि

भवदीय अभय श्रीचरणकमलोंमें इस तुच्छ दासाधमका अनन्त कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणाम स्वीकार करनेकी प्रार्थना है। आपके चरणानुचरोंके श्रीचरणोंमें भी मेरा कोटि-कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणाम है।

आप श्रीहरिके अभिन्न प्रकाश तत्त्व हैं। आप भगवान् श्रीहरिके अत्यन्त प्रियतमजन हैं। भगवान् श्रीगौरचन्द्रके मनोभीष्ट स्थापन करनेके लिये ही आपका शुभाविर्भाव हुआ है। संसाररूपी माया-कवलमें पड़े हुए बद्ध जीवोंका निस्तार करनेके लिये स्वयं भगवान श्रीहरि ही आपके रूपमें प्रकाशित हैं। आपकी ही कृपासे श्रीहरि बद्ध जीवोंके समक्ष प्रकाशित होते हैं।

आप भगवत् सेवानन्दका नित्य नव नवायमान रूपसे आस्वादन करते हैं। आप ही एकमात्र कृष्ण-प्रेम-प्रदाता हैं। आप श्रीगौर-विनोद-वाणी के निर्भीक प्रचारक हैं। आप ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीके प्रियतम पार्षद हैं। आप भगवान्, भक्त, भक्ति विरोधियोंके लिये सिंहस्वरूप हैं, आप सर्वसामर्थ्यवान हैं।

आपकी महिमा असीम अगाध और अपार है। आपकी महिमा श्रीहरिकी महिमासे अभिन्न है। गुरुदासोंके लिये श्रीश्रीगुरुपादपद्म श्रीहरिसे भी अधिक महिमायुक्त हैं, क्योंकि उन्हींकी कृपासे भगवद्कृपा प्राप्त होती है। जिन भाग्यवान व्यक्तियों पर आपकी कृपादृष्टि हो गई है, उनके लिये कहीं भी किसी प्रकारकी बाधा नहीं है। ऐसे व्यक्ति सर्वसामर्थ्यवान बन जाते हैं। आपकी प्रसन्नता ही भगवत्-प्रसन्नता है। भक्ति-पिपासु जीवोंके लिये इस संसार में एकमात्र गति आप ही हैं। अपके वचनोंमें जिनका दृढ़ विश्वास है, वे अवश्य ही परमकल्याण-कारी हैं। आपके चरणों जिनकी निष्ठा-भक्ति है, वे अनन्त कोटि जीवोंका उद्धार करनेमें समर्थ हैं। आप समस्त तीर्थोंके भी तीर्थ-स्वरूप हैं। गङ्गाका स्पर्श करने पर पवित्रता प्राप्त होती है। परन्तु आप ऐसे पवित्र हैं कि आप अपने दर्शनमात्रसे ही समस्त जीवोंको पवित्र कर देते हैं। आपके समान इस संसारमें और कोई दयालु नहीं है। आप ही इस संसारमें एकमात्र पतितपावन हैं। जिनका भगवत् चरणोंमें अपराध हो जाता है, उसे आप क्षमा करानेमें समर्थ हैं; परन्तु आपके चरणोंमें अपराध होने पर उसे क्षमा करनेमें कोई भी समर्थ नहीं है। सदैव ही आपके हृदयमें श्रीहरिका निवास है। आपके श्रीचरणकमलोंकी रज ही इस दासाधमकी एकमात्र गति है आपके प्रसादसे सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। आप ही ने दिव्य ज्ञान प्रदान किया है, जन्म जन्ममें आप ही हमारे प्रभु हैं। सभी शास्त्रोंमें आपकी अपार महिमाका वर्णन है।

यद्यपि आपकी ऐसी अपार महिमा है, तथापि मैं ऐसा दुर्भागा हूँ कि आपकी इस महिमाका कण-मात्र भी छू नहीं पाया। मैं सर्वदा अयोग्य और घृणार्ह हूँ। मेरे समान अपराधी और पापी सारे संसारमें और दूसरा कोई नहीं है। सर्वदा ही आप

मुझ अधमपर अपनी दयाकी वर्षा कर रहे हैं। परन्तु मेरे दुर्दैवके कारण उसका कणमात्र भी ग्रहण नहीं कर सका। आपके समान दयालु और कोई नहीं है। और मेरे समान दयाका योग्यपात्र दुर्लभ है। मैं लज्जा, भय आदि रहित हूँ। सदा सर्वदा ही मैंने पाप-अपराध किये हैं। मैं एक क्षुद्र विषयोंका कीड़ा हूँ। विषयोंको भोगना तो दूर रहा, विषयोंने ही मुझे अपने वशीभूत कर लिया है। अपने आपको मायाबन्धनसे छुड़ानेमें मैं असमर्थ हूँ। आपकी अहैतुकी कृपा ही मेरा एकमात्र आधार है। मुझमें गुण लेशमात्र भी नहीं है। आप अपने गुणोंसे ही मुझपर कृपा करें।

मैंने आपके श्रीचरणकमलोंका कदापि स्मरण नहीं किया। परन्तु आप सर्वदा ही मुझ अधमका ध्यान रखते हैं। परन्तु मैं कृतघ्न होनेके कारण आपकी सेवा भी नहीं किया और आपके श्रीचरणकमलोंका ध्यान भी नहीं किया।

यद्यपि मुझे आपकी सेवा करनेका सुवर्ण-सुयोग प्राप्त हुआ तथापि मैंने शठतापूर्वक उसे खो दिया। आपकी सेवा करना तो दूर रहा, केवल मैंने अपनी स्वार्थपूर्ति ही की है। मैं अत्यधिक स्वार्थी, प्रतिष्ठाकामी, भोगपरायण, लोभी दांभिक और अनर्थमना हूँ। मैं सर्वदा ही परनिन्दा परचर्चा, परहिंसा, द्वेष, अहंकारादि दोषोंसे लिप्त हूँ। मैंने सर्वदा ही आपकी आज्ञाका उल्लङ्घन किया।

मेरे लिये कहीं भी स्थान नहीं है। आपको अपने मुख दिखलानेकी भी योग्यता मुझमें नहीं है। आपके श्रीचरणकमलोंमें मेरी लेशमात्र भी प्रीति नहीं है। मैं निष्ठा-शून्य और आचार-विचार विहीन हूँ। मेरा जीवन पशुओंसे भी गिरा हुआ है। मैं शक्तिरहित, अत्यन्त मूर्ख और क्षुद्र-स्वभाव-युक्त हूँ।

जैसे एक छोटी सी चिड़िया समुद्रको पार करने का असफल प्रयास करती है, वैसे ही मेरा प्रयास निरर्थक है। मैं केवल अपनी दांभिकताका ही प्रदर्शन कर रहा हूँ। आपके श्रीचरणकमलोंकी महिमाको एकमात्र निष्कपट, सरल, और निस्वार्थ व्यक्ति ही जान सकता है। मुझ जैसा कपटी और धूर्तके यह अगोचर है।

आप मुझ दासाधमपर सर्वदा अपनी कृपादृष्टि बनाये रखें। आप मुझपर ऐसी कृपा करें, जिससे मैं आपके प्रियजनोंका दास बन सकूँ। आपके श्रीचरणकमलोंकी धूलि जन्म-जन्मान्तरमें मुझे प्राप्त हो। आपके श्रीचरणकमलोंमें इस अधमकी निष्ठा और भक्ति हो। आप मुझे ऐसी शक्ति और सद्बुद्धि प्रदान करें, जिससे मैं आपकी आज्ञाका कायमनोवाक्यसे पालन कर सकूँ और आपके प्रदर्शित मार्ग पर अग्रसर हो सकूँ। आप मुझपर ऐसी कृपा करें जिससे मैं दीन-हीन, मानशून्य और मानद बन सकूँ। कब मैं आपकी ऐसी कृपा पाकर कृतार्थ बनूँगा ? कब आपके श्रीचरणोंमें मेरी अचला भक्ति होगी ? आपके श्रीचरणकमलोंमें इस दासाधमकी अनन्त कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणाम है।

श्रीचरण कमलोंकी अहैतुकी कृपा प्रार्थी—

कृष्णस्वामीदास

गौड़ीय-संघपति

श्रीश्रीमद्भक्तिसारंग गोस्वामी महाराजका

नित्य-लीलामें प्रवेश

गत १२ ज्येष्ठ (२६ मई) मङ्गलवार, वैशाखी पूर्णिमाकी रातके १ बजे विश्वव्यापी गौड़ीय मठ एवं मिशनोंके प्रतिष्ठाता जगद्गुरु श्रीश्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी "प्रभुपाद" के विश्वमें श्रीचैतन्य मनोभीष्ट प्रचारके सर्वप्रधान स्तंभोंमें अन्यतम, गौड़ीयसंघके प्रतिष्ठाता एवं नियामक आचार्यवर, श्रीगुरु सेवाके मूर्त्तिमान-विग्रह, तथा वैष्णव जगतके उज्ज्वल नक्षत्र--त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद्भक्ति सारंग गोस्वामी महाराजजी समग्र विश्व को म्लान एवं भाग्यहीन बना कर नैश-लीलामें प्रविष्ट हो गए हैं।

बाँकुड़ा जिला (पश्चिम बंगाल) के बिष्णुपुर महकमेके अन्तर्गत पत्रसायेर नामक प्रसिद्ध ग्राममें ३ फरवरी १८८८ ई० को इन महात्माका आविर्भाव हुआ था। बाल्यकाल और युवावस्थामें उच्च शिक्षा और प्रचुर-धन उपार्जन कर १९२१ ई० में मायापुर में श्रील सरस्वती गोस्वामीका चरणाश्रय ग्रहण किया। दीक्षाके अनन्तर ये गौड़ीय वैष्णव जगतमें श्रीमद् अप्राकृत सारंग गोस्वामीके नामसे प्रसिद्ध हुए। इनका गृहस्थाश्रमका नाम श्रीअतुलचन्द्र वन्दोपाध्याय था। दीक्षा-ग्रहणके कुछ ही समय बाद इन्होने घर-बार सब कुछ छोड़कर सर्वतोभावेन श्रीगुरु मनोभीष्ट-सेवामें आत्मनियोग कर दिया तथा श्रीगुरुदेवके आनुगत्यमें देश-विदेशमें श्रीचैतन्य देव द्वारा आचरित-प्रचारित विशुद्ध भक्ति-धर्मका प्रचार किया।

सन् १९३६ ई० में श्रील प्रभुपादने पाश्चात्य देशोंमें श्रीभक्ति-धर्मका प्रचार करनेके लिए गौड़ीय मिशनकी ओरसे इनको "मिशनरी इनचार्ज औफ यूरोप एण्ड अमेरिका" बना कर लण्डनमें भेजा। वहाँ ये बड़ी सफलतासे अपने कार्यमें अग्रसर हुए। परन्तु शीघ्र ही द्वितीय महायुद्ध छिड़ जानेसे तथा श्रील प्रभुपादके अप्रकट-लीलाविष्कारके कारण इनको भारत लौट आना पड़ा।

श्रील सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीकी अप्रकट लीलाके पश्चात् उनके दीक्षित त्रिदण्डी स्वामी परिव्राजकाचार्य श्रीमद्भक्ति रक्षक श्रीधर गोस्वामीजी के निकट वैदिक संन्यास ग्रहण कर गौड़ीय वैष्णव समाजमें परिव्राजकाचार्य त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद्भक्ति सारंग गोस्वामी महाराजके नामसे परिचित हुए। तदनन्तर "गौड़ीय-संघ" की स्थापनाकर भारत के विभिन्न स्थानोंमें उसकी शाखाएँ स्थापित कर बंगला, हिन्दी और अँग्रेजी आदि भाषाओंमें पारमार्थिक पत्रिकाओंका प्रकाशन कर सर्वत्र शुद्धाभक्ति का विपुल प्रचार-प्रसार किया है।

श्रीचैतन्य मनोभीष्ट प्रचार कार्यमें श्रीश्रीगुरुपादपद्मोंमें सर्वस्व न्योछावर कर इन्होंने अपने पीछे श्रीगुरु सेवाका जो महान आदर्श छोड़ा है, वह गौड़ीय वैष्णव समाजको भविष्यमें सदा पथ-प्रदर्शन का कार्य करेगा। इनके तिरोधानसे सारा गौड़ीय वैष्णव समाज तीव्र विरह-वेदनाका अनुभव कर रहा है।

नेहरूजीका परलोकगमन

नव-भारतके निर्माता, प्रधान मंत्री श्रीजवाहरलाल नेहरूके आकस्मिक परलोकगमनसे केवल भारतमें ही नहीं, अपितु विश्वके सभी राष्ट्रोंमें शोकोच्छ्वासकी एक प्रबल तरंग प्रवाहित हो गयी है। वे केवल भारतके ही नहीं, विश्वके नागरिक थे। वे विश्वके लिये सोचते और करते थे। इसीलिये देश-विदेश में सर्वत्र ही उनका अभाव बड़े दुःखके साथ अनुभव किया जा रहा है। उनका यह सिद्धान्त था कि विश्व का प्रत्येक मनुष्य समान रूपसे मानवोचित व्यवहार एवं सुख-सुविधाका अधिकारी है। अपनी इस मान्यता को यथार्थ रूप देनेके लिये उन्होंने अपनी सारी शक्तिको लगाया। इसके लिये व्यापक नर-संहारकारी युद्धों को रोकनेके लिए, संसारमें शान्ति और सद्भाव बढ़ानेके लिए तथा अविकशित राष्ट्रोंको विकशित एवं समृद्ध बनानेके लिए उनकी अथक प्रचेष्टाएँ, अदम्य उत्साह तथा अनुपम त्याग अपनी दिशामें निश्चय ही बेजोड़ है।

श्रीनेहरूजी धर्म-निरपेक्ष एवं तटस्थ-राष्ट्र-नीतिके प्रतीक थे। यह उनकी निजस्व चिन्ताधारा थी। वे वैदिक धर्मको व्यावहारिक जीवनसे स्वतंत्र पृथक रूपमें देखते थे। इसलिए जो लोग धर्मको जीवनका अपरिहार्य अङ्ग मानते हैं, तथा उसे ही पूर्ण आत्मविकास, अमृतत्त्व, पराशान्ति एवं शाश्वत-सुख प्राप्ति का एकमात्र उपाय मानते हैं और व्यावहारिक जीवनको धर्म जीवनके सम्पूर्ण अनुगत रखनेमें ही कल्याण अनुभव करते हैं—वे लोग श्रीनेहरूकी नीतियोंसे सहमत नहीं हैं, यह सत्य है, फिर भी सर्वधर्म समन्वयकी छायामें धर्म-निरपेक्ष-राष्ट्र-गठन ही उनका मूल उद्देश्य था—चाहे फल जैसा भी हुआ हो। "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः" के अनुसार नेहरूजी भी उस अवश्यंभावी गतिको प्राप्त हुए हैं। परन्तु मृत्यु भौतिक देह की होती है, आत्माकी नहीं; आत्मा अमर है। अतएव हम अपने प्रिय प्रधान मंत्रीकी परलोकगत आत्माकी पराशान्तिकी कामना करते हैं।

———

श्रीश्रीव्यास पूजा-महोत्सव

श्रीगौड़ीय-वेदान्त समितिके अन्तर्गत श्रीउद्धारण गौड़ीय मठ, चुचुड़ा (बंगाल) में इस वर्ष भी १७ फाल्गुन, १ मार्च रविवार से १९ फाल्गुन, ३ मार्च, मंगलवार तीन दिनों तक श्रीश्रीव्यास पूजाका विराट समारोहसे अनुष्ठान हुआ है।

रविवार शुभ मङ्गलमयी तृतीया तिथिको परमाराध्यतम ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति प्रज्ञानकेशव गोस्वामी महाराजका शुभाविर्भाव महोत्सव मनाया गया। प्रातः उषाकालसे ही श्रीगुरु-वैष्णव महिमा सूचक पदावलियोंका कीर्तन होने लगा। तदन्तर तत्त्वपञ्चकोंको पूजा और वैष्णव-होमके पश्चात् श्रीश्रीगुरुचरणोंमें पुष्पांजलि प्रदान की गयी। शामको सभामें विभिन्न भाषाओंमें लिखित पुष्पांजलियों का पाठ हुआ। तदनन्तर परमाराध्यतम श्रील आचार्यदेवका सारगर्भित भाषण हुआ। मंगलवार पंचमी तिथिको श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर "प्रभुपाद" की आविर्भाव-तिथिके उपलक्ष्यमें सवेरे पुष्पांजलि तथा सामको सभामें श्रीचिद्घनानन्द ब्रह्मचारी, त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराज तथा त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद्भक्ति वेदान्त त्रिविक्रम महाराजके भाषणके पश्चात् श्रील आचार्यदेव का भाषण हुआ। दोनों दिन उपस्थित सबको महाप्रसाद वितरण किया गया। समितिके समस्त शाखा मठोंमें भी इसी प्रकार उत्सव मनाये गये हैं।

———